पूर्वांचल खेती

वर्ष : 33 अगस्त 2023 अंक : 08

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वांचल खेती

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वांचल खेती

वर्ष 33 | अगस्त 2023 | अंक 08

संरक्षक

डॉ. बिजेन्द्र सिंह

कुलपति

प्रधान सम्पादक

डॉ. आर. आर. सिंह

अपर निदेशक प्रसार

तकनीकी सम्पादक

डॉ. अनिल कुमार

सहायक प्राध्यापक, प्रक्षेत्र प्रबन्ध

सम्पादक मण्डल

डॉ. वी. पी. चौधरी

सहायक प्राध्यापक, पादप रोग

डॉ. पंकज कुमार

सहायक प्राध्यापक, कीट विज्ञान

सम्पादक

उमेश पाठक

मोबाइल नं. 9415720306

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखक के निजी हैं। प्रकाशक/सम्पादक इसके लिए उत्तरदायी नहीं है

विषय सूची

कंगनी की उन्नत खेती एवं उत्पादन तकनीक 01
सौरभ वर्मा, कोटेश लमानी एवं वी.पी. सिंह

काला नमक (धान) स्वाद और गुणों की वजह से बढ़ती मांग 03
रत्नाकर पांडये, अरविंद कुमार सिंह एवं तरुण कुमार

वैज्ञानिक विधि से परवल की खेती 05
निमित सिंह

मिर्च की उत्पादन तकनीक 07
मनोज कुमार सिंह, राम लखन सिंह एवं पी के मिश्रा

ऊसर मृदाएँ एवं उनका प्रवंधन 10
अजय बाबू, प्रदीप कुमार मिश्रा एवं राजीव कुमार सिंह

लेजर लैंड लेवलिंग खेत को बनाएं समतल, पानी–खाद और ईंधन की करें बचत 12
देवेश कुमार वैज्ञानिक एवं अरविन्द कुमार सिंह

एजोला पशुधन के लिए सदाबहार चारा 14
हनुमान प्रसाद पांडे' एवं प्रतीक सिंह

भारतीय कृषि में नवीनतम् तकनीक ड्रोन से सकारात्मक बदलाव 16
रीतेश सिंह गंगवार एवं हनुमान प्रसाद पाण्डेय

धान की फसल में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के लक्षण एवं उनका निदान 18
प्रवेश कुमार, शेषनारायण एवं ओम प्रकाश

बैंगन की फसल में लगने वाले प्रमुख कीट एवं उनकी रोकथाम 20
अमन प्रताप सिंह एवं विश्व विजय रघुवंशी,

श्री अन्न (सुपर फूड/मिलेटस) द्वारा महिला स्वंय सहायता समूह में उद्यमिता विकास 22
श्रीमती रेनू सिंह एवं आर के0 आनन्द

दुधारू पशुओं का प्रबंधन 23
डी०डी० सिंह, बी० पी० शाही एवं आर० आर० सिंह

अगस्त माह में किसान भाई क्या करें 26

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के 27

प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

विश्वविद्यालय के कार्य क्षेत्र में स्थापित विभिन्न कृषि विज्ञान/ज्ञान केन्द्र एवं अनुसंधान केन्द्र

क्र. सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	वरिष्ठ वैज्ञानिक/अध्यक्ष/प्रभारी अधिकारी	दूरभाष कार्यालय	मोबाइल
1.	वाराणसी	डॉ. नरेन्द्र रघुवंशी	05542–248019	9415687643
2.	बस्ती	डॉ. एस.एन. सिंह	05498–258201	9450547719
3	बलिया	डॉ. संजीत कुमार	–	9837839411
4.	फैजाबाद	डॉ. विनायक शाही	05278–254522	8755011086
5.	मऊ	डॉ. वी.के. सिंह	0547–2536240	8005362591
6.	चंदौली	डॉ. एस. पी. सिंह	0541–2260595	9458362153
7.	बहराइच	डॉ. के.एम. सिंह	05252–236650	9307015439
8.	गोरखपुर	डॉ. सतीश कुमार तोमर	–	9415155518
9.	आज़मगढ़	डॉ. डी.के. सिंह	–	9456137020
10.	बाराबंकी	डॉ. शैलेश कुमार सिंह	–	9455501727
11.	महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	–	7839325836
12.	जौनपुर	डॉ. सुरेश कुमार कनौजिया	–	9984369526
13.	सिद्धार्थनगर	डॉ. ओम प्रकाश	05541–241047	9452489954
14.	सोनभद्र	डॉ. पी. के. सिंह	–	9415450175
15.	बलरामपुर	डॉ. एस. के. वर्मा	–	9450885913
16.	अम्बेडकरनगर	डॉ. रामजीत	–	9918622745
17.	संतकबीरनगर	डॉ. अरविन्द सिंह	–	9415039117
18.	अमेठी	डॉ. रतन कुमार आनन्द	–	9838952621
19.	बहराइच (नानपारा)	डॉ. शशिकान्त यादव	–	9415188020
20.	मनकापुर–गोण्डा	डॉ. पी.के. मिश्रा प्रभारी	–	9936645112
21.	बरासिन–सुल्तानपुर	डॉ. वी.पी. सिंह	–	9839420165
22.	अमिहित–जौनपुर	डॉ. आर.के. सिंह	–	9452990600
23.	गाजीपुर	डॉ. आर. सी. वर्मा	–	9411320383
24.	श्रावस्ती	डॉ. विनय कुमार	–	–
25.	आजमगढ़ द्वितीय	डॉ. एल.सी. वर्मा	–	7376163318

विश्वविद्यालय के कृषि ज्ञान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाष कार्यालय
1.	अमेठी	डॉ. आर. आर. सिंह	9450938866	–
2.	गोण्डा	डॉ. आर. आर. सिंह	9450938866	–
3.	देवरिया	डॉ. आर. आर. सिंह	9450938866	–
4.	गाजीपुर	डॉ. आर. आर. सिंह	9450938866	–

विश्वविद्यालय के अनुसंधान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि अनुसंधान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाष कार्यालय
1.	मसौधा, फैजाबाद	डॉ. डी. के. द्विवेदी	7706884188	05278–254153
2.	तिसुही, मिर्जापुर	डॉ. पी. के. सिंह	9415450175	05442–284263
3.	बसुली, महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	9451430507	–
4.	घाघरा घाट, बहराइच	डॉ. महेन्द्र सिंह	9026289336	0525–235205
5.	बड़ा बाग, गाजीपुर	डॉ. सी. पी. सिंह	9628631637	–
6.	बहराइच	डॉ. महेन्द्र सिंह	8787289358	0548–223690

डॉ. आर. आर. सिंह
अपर निदेशक प्रसार

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या-224 229 (उ.प्र.), भारत
टेलीफैक्स : 05270-262821
फैक्स : 05270-262821

सम्पादकीय

मानव जीवन में स्वस्थ व पोषण युक्त भोजन की उपलब्धता कृषि से होने के कारण ही इस कार्य को उत्तम कार्य की संज्ञा दी गयी है। भारतीय संस्कृति में कृषि को उत्तम तथा व्यवसाय और नौकरी को दोयम दर्जे का माना गया है। समय के चक्र के साथ वर्तमान परिस्थितियों में कृषि क्षेत्र का महत्व किसी से छिपा नहीं है। नित्य प्रति के खाद्यान्न से लेकर, फल, सब्जी व दूध जैसी दैनिक वस्तुओं के गुणवत्तायुक्त उत्पादन को प्राप्त करने की होड़ गांव से लेकर शहर तक की आबादी तक में है। अब कृषि उत्पादन की दरें उनकी विशिष्टता, गुणवत्ता के आधार पर निश्चित हो रही है। कृषक भाईयों में भी रसायनयुक्त, प्राकृतिक विधि व जैविक खेती कर बेहतर कृषि उत्पादन विधियां अपनायी जा रही हैं।

इसी के दृष्टिगत इस पत्रिका के माध्यम से कृषक, पशु पालक भाईयों तक बेहतर तकनीकें पहुंचाने के प्रयास किये जा रहे हैं।

आशा है पत्रिका का यह अंक हमारे किसान भाईयों व प्रसार कार्यकर्ताओं के लिये उपयोगी सिद्ध होगा।

(आर.आर. सिंह)

कंगनी की उन्नत खेती एवं उत्पादन तकनीक

सौरभ वर्मा, कोटेश लमानी एवं वी.पी. सिंह

दुनियाभर में भारत मिलेट्स अथवा श्रीअन्न का गढ़ है। मिलेट्स 131 देशों में विकसित तथा एशिया और अफ्रीका में 59 करोड़ लोगों के लिए पारंपरिक भोजन है। मिलेट्स को अक्सर उच्च पोषण सामग्री के कारण 'न्यूट्री–अनाज' अथवा श्रीअन्न कहा जाता है। कंगनी दुनिया में मोटे अनाज उत्पादन में दूसरी सबसे अधिक बोई जाने वाली फसल है। इसे कांकुन या टांगुन नाम से भी जाना जाता है। कंगनी एक बहुउद्देश्यीय फसल है जिसे खाना, चारा और औषधीय के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। इसका उपयोग गर्भवती और स्तनपान कराने वाली महिलाओं के लिए, एक ऊर्जा के रूप में किया जाता है और बीमार लोग और बच्चे के लिए भी ये काफी पोषण युक्त है। कंगनी को मधुमेह रोग का डायबिटिक फूड माना जाता है। यह आहार फाइबर, खनिज, सूक्ष्म पोषक तत्व, प्रोटीन, और कम ग्लाइसेमिक इंडेक्स का एक अच्छा स्त्रोत है।

कंगनी एकवर्षीय घास है जिसका पौधा 4–7 फीट ऊँचा होता है, बीज बहुत महीन लगभग 2 मिलीमीटर के होते हैं, इनका रंग किस्म किस्म में भिन्न होता है, जिनपे पतला छिलका होता है जो आसानी से उतर जाता है। भारत में, यह मुख्य रूप से आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, तेलंगाना, राजस्थान, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश और कुछ हद तक भारत के पूर्वोत्तर राज्यों में उगाया जाता है। कंगनी से रोटियां, खीर, भात, इडली, दलिया, मिठाई बिस्कुट आदि बनाये जाते हैं।

राज्यों में कंगनी की उन्नत किस्में :–

उत्तर प्रदेश : पी.आर.के. 1, पी.एस. 4, एस.आई.ए. 3085, एस.आई.ए. 3156, स्रिलस्मि, नरसिंहराय, एस. 114

बिहार : आर.ए.यू. 1, एस.आई.ए. 3156, एस.आई.ए. 3085, पी.एस. 4, आर.ए.यू. 2

उत्तराखंड : पी.एस. 4, पी.आर.के. 1, स्रिलस्मि, एस. आई.ए. 326, एस.आई.ए. 3156, एस.आई.ए. 3085

राजस्थान : प्रताप कंगनी 1 (एस.आर. 51), एस.आर. 1, एस.आर. 11, एस.आर. 16, एस.आई.ए. 3085, एस. आई.ए. 3156, पी.एस. 4

मिट्टी और जलवायु

कंगनी की फसल मध्यम भूमि में अच्छी उपज देती है। हालांकि, अच्छी पैदावार के लिए उपजाऊ अच्छी जल निकासी वाली मिट्टी अच्छी मानी जाती है। यह फसल रेतीली से भारी मिट्टी और चिकनी मिट्टी पर भी अच्छी उपज देती है। इसकी फसल 500–700 मिमी वार्षिक वर्षा वाली जगह में बेहतर उपज देती है। कंगनी की फसल जल भराव को सहन नहीं कर सकती और ज्यादा सूखा होने पर भी फसल को नुकसान होता है।

बुवाई का समय

खरीफ के समय में इसकी फसल की बिजाई जुलाई–अगस्त में की जाती है। तमिलनाडु, तेलंगाना और में इसकी बिजाई जुलाई में की जाती है और महाराष्ट्र में जुलाई के दूसरा–तीसरा सप्ताह में की जाती है। रबी के समय में इसकी फसल की बिजाई अगस्त से सितंबर (तमिलनाडु) में की जाती है। कंगनी की बिजाई अप्रैल से जुलाई के बीच कभी भी की जा सकती है।

बीज की मात्रा

फसल की लाइन में बिजाई के लिए 4–5 किलोग्राम बीज काफी है। छिटकवा विधि में फसल का 7–8 किलोग्राम बीज काफी है। बुवाई से पहले बीज को रिडोमिल से 2 ग्राम दवा का इस्तेमाल प्रति किलो बीज के दर से उपचारित करे या कार्बेन्डाजिम 2 ग्राम दवा का इस्तेमाल प्रति किलो बीज के हिसाब से भी कर सकते है। फसल की बुवाई के समय कतार से कतार की दूरी 25–30 सें.मी. रखे और पौधे से पौधे की दूरी 8–10 सें.मी. रखे। कंगनी की रोपाई भी की जा सकती है जिसके लिए 2.0 किग्रा प्रति हेक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है। बीज को 2–3 सेमी गहराई पे जमीन में रोपे।

खाद और उर्वरक

आमतौर पर अच्छी उपज के लिए खाद एवं उर्वरकों की सिफारिश की जाती है। गोबर की खाद 12 टन

कृशि विज्ञान केन्द्र बरासिन, सुलतानपुर

प्रति हेक्टेयर की दर से लगभग एक माह बुवाई से पहले खेत में डालें। अच्छी फसल प्राप्त करने के लिए 40–50 किलो नाइट्रोजन, 20 किलो फोस्फोरस और 10 किलोग्राम पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में डालें। फास्फोरस और पोटाश की पूरी मात्रा और आधी नाइट्रोजन बुवाई के समय दें और शेष आधा नाइट्रोजन बुवाई के 30 दिनों के बाद दें।

निराई और गुड़ाई

पंक्ति विधि से बुवाई की गई फसल में दो बार खरपतवार नियंत्रण के लिए हल या हैरो की मदद से निराई और गुड़ाई की जा सकती है और बाद में हाथ से निराई खरपतवार नियंत्रण में असरदार है। अन्तःसस्य क्रियाओं में फसल की बुवाई के 30 दिन उपरान्त टाइन–हैरो का प्रयोग करें। हाथ से छिड़क कर बुवाई की गयी फसल में पहली निराई–गुड़ाई अंकुर निकलने के 15–20 दिन बाद करे और दूसरी गुड़ाई के 15–20 दिन बाद की जानी चाहिये।

सिंचाई प्रबन्धन

खरीफ ऋतु में फसल के लिए सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। ये फसलें ज्यादातर वर्षा आधारित फसल के रूप में उगायी जाती है। हालांकि, लंबे अवधि तक शुष्क दौर बने रहने की स्थिति में 1–2 सिंचाइयां देनी चाहिए। ग्रीष्मकालीन फसल के लिए 2–5 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है और ये मिट्टी के प्रकार और जलवायु परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

बीमारी

ब्लास्ट (पाइरिक्युलिया सेटेरिया), रस्ट (यूरोमाइसिस सेटेरिया), ब्राउन स्पॉट (कोक्लियोबोलस सेटेरिया)।

लक्षणः विशिष्ट धुरी के आकार के धब्बे पत्ती पर बनते है। अत्यधिक अनुकूल परिस्थितियों में ऐसे धब्बे बड़े हो जाते हैं, और आपस में मिल जाते हैं और पत्ती के फलक बन जाते हैं। विशेष रूप से टिप से बेस की ओर एक ब्लास्ट उपस्थिति होती है। जंग के दाने तिरछे, भूरे रंग के होते हैं, जो अक्सर रैखिक पंक्तियों में बनते हैं। ये पत्ती के खोल, कल्म पर भी पैदा होते हैं और फसल की उपज में कमी का कारण बनते है।

नियंत्रण के उपाय

ब्लास्ट के नियंत्रण के लिए कार्बेन्डाजिम 0.1 प्रतिशत या ट्राइसाइक्लाजोल 0.05 प्रतिशत का छिड़काव फसल को रोग मुक्त बनाता है।

रस्टः मैंकोजेब 0.2 प्रतिशत का छिड़काव करें और स्प्रे केवल फसल के विकास के प्रारंभिक चरण में दिखाई देते हैं।

ग्रेन स्मट (उस्टिलागो क्रैमेरी)

नियंत्रण के उपायः बीजों का उपचार कार्बोक्सिन या कार्बेन्डाजिम 2.0 ग्राम प्रति किग्रा बीज की दर से करें।

डाउनी मिल्ड्यू या ग्रीन ईयर (स्क्लेरोस्पोरा ग्रैमिनिकोला)

नियंत्रण के उपायः बीजों का उपचार रिडोमिल एमजेड 6 ग्राम प्रति किग्रा की दर से करें।

फसल में कीट नियंत्रण

आर्मी वर्म, कट वर्म और लीफ स्क्रैपिंग बीटल कभी–कभी गंभीर रूप में दिखाई देते हैं। क्षेत्रों में प्ररोह मक्खी भी पाई जाती है, हालांकि यह नियमित नहीं है। इमिडाक्लोप्रिड 10–12 मिली प्रति किग्रा बीज से उपचार या थियामेथोक्सम 3 ग्राम प्रति किग्रा बीज की दर से प्रयोग किया जा सकता है। कार्बोफ्यूरान और फोरट का इस्तेमाल कीट नियंत्रण के लिए किया जा सकता है।

अनाज की उपज

अनाज की उपज 20–25 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक होती है और भूसा 45–60 क्विंटल प्रति हेक्टेयर हो जाती है।

कंगनी की फसल 100 दिन में पक कर तैयार हो जाती है। इसलिए बिजाई के समय इस बात का ध्यान रखिये कि अगर बुवाई अप्रैल में कर रहे हैं तो कंगनी को ज्यादा पानी लगाने की जरूरत पड़ सकती है और खरपतवार की समस्या भी बढ़ सकती है और ये फसल जुलाई में पकेगी। अगर बिजाई मई में करते हैं तो ये अगस्त में पकेगी। इस बात का भी ध्यान रखना चहिए कि फसल पकने के समय बारिश ना शुरू हो जाएँ और अगली फसल कौनसी है जिसकी बिजाई है उस अनुसार ही कंगनी की बिजाई का समय निर्धारित करें।

काला नमक (धान) स्वाद और गुणों की वजह से बढ़ती मांग

रत्नाकर पांडये, अरविंद कुमार सिंह एवं तरुण कुमार

भारत में ही नहीं बल्कि कई अन्य देशों में चावल की मांग बहुत अधिक है। जिसके कारण मुख्य रूप से इसकी खेती की जाती है। चावल की उपज और स्वास्थ्य लाभ को ध्यान में रखते हुए चावल की कई किस्में तैयार की गई हैं जो सेहत से लेकर खेती तक के लिए फायदेमंद हैं। ऐसे में बाजार में इन दिनों काले नमक वाले चावल की मांग बढ़ती जा रही है। काले नमक वाले चावल की खासियत देख किसान भी इसकी खेती करने लगे हैं। वहीं बाजारों में भी इसकी डिमांड बढ़ रही है। ऐसे में आइये जानते हैं क्या है काला नमक चावल, इसकी विशेषता और क्यों की जाती है इसकी खेती। 'काला नमक' चावल बहुत उच्च गुणवत्ता वाला चावल है। काले रंग की भूसी के कारण इसका नाम 'काला नमक' चावल पड़ गया। काला नमक (ठसंबा त्पबम) चावल में कॉफी और चाय की तुलना में अधिक एंटीऑक्सीडेंट गुण होते हैं, जिसके कारण यह स्वास्थ्य संबंधी कई बीमारियों के लिए फायदेमंद होता है। अधिक मात्रा में मौजूद एंटी–ऑक्सीडेंट गुण शरीर की रोगों से लड़ने की शक्ति को बढ़ाते हैं। विशेषज्ञों की मानें तो काला चावल कई बीमारियों से लड़ने में मदद करता है। सफेद और भूरे चावल की तुलना में काला चावल में आयरन, मैग्नीशियम, विटामिन ई, विटामिन बी, कैल्शियम और जिंक पाया जाता है। काला नमक चावल का इतिहास इसके महत्व का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि इस चावल का सीधा संबंध भगवान बुद्ध से माना जाता है और इसलिए इसे 'महात्मा बुद्ध का महाप्रसाद' भी कहा जाता है। इस चावल का इतिहास कम से कम 600 ईसा पूर्व या बुद्ध काल का है। प्राचीन काल में, यह चावल मूल रूप से उत्तर प्रदेश और नेपाल के तराई क्षेत्र में उगाया जाता था। लाजवाब स्वाद और बेमिसाल सुगंध वाले काला नमक (धान) की खेती के दिन बहुरने लगे हैं। वजह, 60 साल पहले तक होने वाली खेती के रकबा में जबरदस्त उछाल आया है। इस वर्ष यह आंकड़ा पिछले सारे रिकर्ड ध्वस्त कर 50 हजार हेक्टेयर पार कर गया है। इस वर्ष काला नमक की सर्वाधिक खेती तकरीबन 10 हजार हेक्टेयर सिद्घार्थनगर में हुई है तो दूसरे व तीसरे स्थान पर गोरखपुर और महराजगंज हैं। साठ साल बाद पहली बार ऐसा हुआ है जब खरीफ के मौजूदा फसली सीजन में पूर्वांचल के तीन मंडलों बस्ती, गोरखपुर और देवीपाटन मंडल के 11 जिलों –बस्ती, संतकबीर नगर, सिद्घार्थनगर, बहराईच, बलरामपुर, गोंडा, श्रावस्ती, गोरखपुर, देवरिया, कुशीनगर और महराजगंज– के करीब 50 हजार हेक्टेयर भूमि पर इसकी रोपाई हुई है। वैसे तो कालानमक सिद्घार्थनगर जिले का 'एक जिला एक उत्पाद' है। इसी के अनुरूप इसका सर्वाधिक रकबा 10 हजार हेक्टेयर भी इसी जिले में है। रकबे के हिसाब से गोरखपुर और महराजगंज क्रमशः दूसरे और तीसरे नंबर पर हैं।

किसानों के लिए फायदेमंद काला नमक धान

रासायनिक खेती की वजह से मिट्टी की उर्वरता लगातार कम होती जा रही है जिस वजह से सरकार और किसान दोनों जैविक खेती की ओर बढ़ते जा रहे हैं। काला नमक (ठसंबा त्पबम) चावल की खासियत यह है कि इसे आमतौर पर जैविक खेती के जरिए ही उगाया जाता है। यानी धान की यह विशेष किस्म बिना खाद और कीटनाशकों की मदद से उगाई जाती है और यह जैविक खेती के लिए पूरी तरह उपयुक्त प्राचीन किस्म है। जाहिर सी बात है कि जब इसकी खेती में खाद और कीटनाशकों का इस्तेमाल अधिक नहीं करना पड़ता है तो किसानों की जेब का बोझ भी कम हो जाता है और उनकी फसल की लागत भी काफी कम हो जाती है। लेकिन जहां तक उपज की बात है तो यह उसी क्षेत्र में धान की अन्य किस्मों की तुलना में 40 से 50 प्रतिशत अधिक उपज देती है। इसकी एक और विशेषता यह है कि इसमें तना सड़न या भूरा धब्बा रोग की शिकायत नहीं होती है, जो कई बार धान की अन्य फसलों में किसानों के लिए बहुत बड़ा सिरदर्द बन जाता है।

किसानों को बीज की उपलब्धता – काला नमक चावल की खेती के लिए किसानों को बीज की जरूरत होती है। ऐसे में किसान नजदीकी बीज केंद्र या कृषि विज्ञान केंद्र से काला नमक चावल किस्म के बीज खरीद सकते हैं। हालांकि मांग ज्यादा होने के कारण

पादप प्रजनन, कीट विज्ञान, कृषि वानिकी, कृषि विज्ञान केंद्र, संत कबीर नगर

इस किस्म को लेकर बाजार में कालाबाजारी और नकली बीजों का कारोबार भी बढ़ गया है। ऐसे में किसानों को बीज खरीदते समय सावधानी बरतने की सलाह दी जाती है

काले धान (काला नमक धान) कितने दिनों में तैयार। – काला नमक, जवा फूल, तिलक चंदन, मल्ली फूल जैसी नौ तरह की पुरानी देसी किस्म खेती के उपयुक्त है काला नमक उत्पादकता कम आती है लेकिन गुणवत्ता अच्छी होती है। सामान्य तौर पर 115 से 120 दिन में धान की फसल तैयार हो जाती है लेकिन काला नमक 140 दिन में तैयार होता है। उत्पादन भी सही मिलता है, वहीं जहां एक एकड़ से सामान्य धान 20 से 25 क्विंटल होता है तो काले धान की पैदावार 8 से 10 क्विंटल ही होती है।

काला नमक और मिट्टी– काले धान की खेती भी लगभग सामान्य धान की खेती की जैसी ही की जाती है। काला धान की खेती वैसे ही खेतो में होती है, जैसे खेतो मे समान्य धान की खेती होती है। इसकी खेती वही संभव है जहां पानी ज्यादा न लगता हो। क्योंकि इसे हाइब्रिड धानों के मुकाबले कम पानी की आवश्यकता होती है। इसके पौधों की हाइट तकरीबन साढे 4 फीट से लेकर 5 फीट तक के होते हैं और इसमें फर्टिलाइजर के रूप में सिर्फ पोटाश का उपयोग हो सकता है। यूरिया एवं अन्य उर्वरक के प्रयोग से पौधे और ज्यादा लंबे होकर गिरने की संभावना रहती है। जैविक तरीके से काला धान की खेती काफी बेहतर होती है।

रोगों से बचाव – झौंका रोग – एक फफूंदजनित रोग है और इसका कारक मैग्नीपारथी गराइसिया है। इस रोग के लक्षण पौधे के सभी वायवीय भागों पर दिखाई देते हैं। परंतु सामान्य रूप से पत्तियां और पुष्पगुच्छ की ग्रीवा इस रोग से अधिक प्रभावित होती हैं। प्रारंभिक लक्षण नर्सरी में पौध की पत्तियों पर नाव जैसे अथवा आंख जैसे धब्बे के रूप में प्रकट होते हैं। ये धब्बे 0.5 सें.मी. से लेकर कई सें.मी. तक लंबे होते हैं। इनके किनारे भूरे लाल रंग के तथा मध्य वाला भाग श्वेत धूसर अथवा राख जैसे रंग का होता है। पाध की रोपाई के पश्चात लक्षण खेत में पौधों पर कई स्थानों पर दिखाई देते हैं। ये कल्ले फूटने के समय सम्पूर्ण फसल पर फैल जाते हैं। बाद में धब्बे आपस में मिलकर पौधे के सभी हरे भागों को ढंक लेते हैं। जिससे फसल जली हुई प्रतीत होती है। रोग के लक्षण स्तंभ संधि/स्तंभ नोड और तुशनिपत्रा पर भी दिखाई देते हैं। इन पर भूरे से काले धब्बे बनते हैं। तने पर यह काला रंग 1 या 2 सें.मी. तक दोनों ओर फैल सकता है। बाली के बाहर निकलने पर पुष्पगुच्छ ग्रीवा में संक्रमण होता है। ग्रीवा का रोगी भाग सिकुड़कर काला हो जाता है। इस भाग को धूसर कवक जाल ढक लेता है। यह अवस्था ग्रीवा संक्रमण अथवा ग्रीवा विगलन के नाम से जानी जाती है। यदि इस प्रकार का संक्रमण आरंभ में ही हो जाता है, तब बाली सीधी निकलती है। इसमें दाने आंशिक अथवा पूर्णरूपेण नहीं बनते हैं, परंतु जब यह संक्रमण बाली में दाने बनने के बाद होता है, तो ग्रीवा ऊतकों की मृत्यु के कारण बाली टूटकर नीचे लटक जाती है। ऐसी बालियों को खेत में दूर से देखा जा सकता है तथा रोग की इस अवस्था में उत्पादन की अधिकतम हानि होती है।

रोग नियंत्रण – बीज का चयन रोगरहित फसल से करना चाहिए,फसल की कटाई के बाद खेत में रोगी पौध अवशेषों एवं ठूठों इत्यादि को एकत्र करके नष्ट कर देना चाहिए।उपचारित बीज ही बोना चाहिए। इसके लिए थीरम 75 प्रतिशत की 2.5 ग्राम अथवा कार्बेडाजिम 50 प्रतिशत डब्ल्यूपी की 2.0 ग्राम मात्रा प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचार करना चाहिए। इस रोग के नियंत्रण के लिए निम्न में से किसी एक रसायन को प्रति हैक्टर 500–600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिएः कार्बेडाजिम 50 प्रतिशत डब्ल्यूपी–500 ग्राम, ट्राइसाइक्लाजोल 75 प्रतिशत डब्ल्यूपी–300 ग्राम, हेक्साकोनाजोल 5.0 प्रतिशत ईसी–1 लीटर, प्रोपिकोनाजोल 25 प्रतिशत ईसी–500 मि.ली.

पर्ण झुलसा अथवा शीथ झुलसा– यह फफूंदीजनित रोग है, जिसका कारक राइजोक्टोनिया सोलेनाई है। पूर्व में इस रोग को अधिक महत्व का नहीं माना जाता था। अधिक पैदावार देने वाली एवं अधिक उर्वरक उपभोग करने वाली प्रजातियों के विकास के साथ अब यह रोग धान के रोगों में अपना प्रमुख स्थान रखता है, जो कि व्यापकतानुसार उपज में 50 प्रतिशत तक नुकसान करता है।

रोग प्रबंधन – बीज उपचार,धान के बीज को स्यूडोमोनास फ्लारेसेन्स की 10 ग्राम अथवा ट्राइकोडर्मा 4 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करके बुआई करें।

रासायनिक उपचार– रोग के लक्षण खड़ी फसल में दिखाई देने पर निम्नलिखित किसी एक रसायन का

(शेष पृष्ठ 09 पर)

वैज्ञानिक विधि से परवल की खेती

निमित सिंह

परवल अत्यन्त ही सुपाच्य, पौष्टिक, स्वास्थ्यवर्धक एवं औषधीय गुणों से भरपूर एक लोकप्रिय सब्जी है। परवल चढ़ने वाला पौधा होता है, जिसका कच्चा फल सब्जी के लिये प्रयोग किया जाता है। इसकी खेती सम्पूर्ण भारतवर्ष में की जाती है। बिहार, बंगाल, उत्तर प्रदेश, आसाम, केरल एवं तमिलनाडु में इसकी खेती अधिक की जाती है। उत्तरी बिहार एवं पूर्वी उत्तर प्रदेश से इसका फल बहुत दूर–दूर तक भेजा जाता है। इसका प्रयोग मुख्य रूप से सब्जी, अचार और मिठाई बनाने के लिए किया जाता है। यह शीतल, पित्तनाशक, हृदय एवं मूत्र सम्बन्धी रोगों में काफी लाभदायक है। इसमें विटामिन, कार्बोहाइड्रेट तथा प्रोटीन अधिक मात्रा में पायी जाती है। परवल के छिलकों में मैग्नीशियम, पौटेशियम भी भरपूर मात्रा में होता है। निर्यात की दृष्टि से परवल एक महत्वपूर्ण सब्जी है।

आहार मूल्य

इसका आहार मूल्य इस प्रकार है।

नमी	–	92.0 ग्राम
वसा	–	00.3 ग्राम
रेशा	–	3.0 ग्राम
कैलोरीज	–	20 ग्राम
प्रोटीन	–	2.0 ग्राम
खनिज पदार्थ	–	0.5 ग्राम
कार्बोहाइड्रेट	–	2.2 ग्राम
विटामिन ए	–	25.50 I.U.
रीवोफ्लेविन अम्ल	–	0.06 मि.ग्राम
विटामिन सी	–	29 मि.ग्राम
थियामिन	–	0.05 मि.ग्राम
मैगनीशियन	–	9 मि.ग्राम
फॉस्फोरस	–	40 मि.ग्राम
पोटैशियम	–	83 मि.ग्राम
कैल्शियम	–	30 मि.ग्राम

उन्नत ील किस्में

सामान्य किस्में : काशी सुफल, काशी अलंकार, स्वर्ण अलौकिक, स्वर्ण रेखा, एफ.पी.–1, एफ.पी.–3 एफ.पी. –4, राजेन्द्र परवल–1, राजेन्द्र परवल–2, चेस संकर–1, चेस संकर–2, कल्यानी, गुली, डन्डाली, निरिया, दामोदर, बिहार शरीफ, सतोंखियाँ, एच.पी. 1,3,4,5।

भूमि एवं जलवायु

परवल की खेती के लिए सामान्यतः गर्म एवं आर्द जलवायु उपयुक्त होती है। ऐसे क्षेत्र जिनमें औसत वार्षिक वर्षा 100 से 110 सें.मी. तथा पाले का प्रकोप नहीं होता है इसकी खेती के लिए उत्तम मानी जाती है। अच्छी उपज के लिए बलुई दोमट भूमि जिसमें जीवांश पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो, उत्तम मानी जाती है। परवल की सफल खेती के लिए नदी के किनारे की जलोढ़ मिट्टी अत्यन्त उपयोगी रहती है। भूमि का चयन करते समय यह ध्यान देना चाहिए कि उसमें जल निकास का उचित प्रबन्ध हो।

खाद, उर्वरक एवं गड्ढे की तैयारी

परवल में खाद एवं उर्वरक का प्रयोग खेत की तैयारी के समय करते है। प्रथम वर्ष खेत की तैयारी के समय खेत में 2 मीटर की दूरी पर नाली बना लेते हैं। बनी हुई नाली पर 1 मीटर की दूरी पर 40 ग 40 ग 40 से.मी गहरा गड्ढा बना लेते हैं। यदि पौधों को मचान पर चढ़ाना है तो लाईन से लाईन के बीच की दूरी 2 मीटर व पौधे से पौधे की दूरी 60–80 से.मी रखते हैं। प्रत्येक गड्ढे में 4–6 किलोग्राम सड़ी गोबर की खाद या कम्पोस्ट, 100 ग्राम यूरिया, 125 ग्राम डी.ए.पी. 75 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश, 100 ग्राम नीम की खली तथा 5 ग्राम फ्यूराडान मिलाकर भर देते हैं। पुनः अप्रैल व जुलाई के महीने में गुड़ाई करने के बाद प्रत्येक पोधे को लगभग 100 ग्राम यूरिया देकर मिट्टी चढ़ा देते हैं। नवम्बर से जनवरी तक पौधा अधिक ठंड के कारण सुसुप्तावस्था में रहता है। फरवरी के महीने में गर्मी बढ़ने के साथ–साथ नई पत्तियां किलने लगती हैं। इस समय पौधे की निराई–गुड़ाई करके प्रत्येक पौधे को 100 ग्राम यूरिया देकर एक बार पुनः मिट्टी चढ़ा देते हैं। इसके बाद सिंचाई कर देते हैं। इसी प्रकार खाद एवं उर्वरकों के व्यवस्था दूसरे तथा तीसरे वर्ष फसल लेने के लिए भी करते हैं।

पौध तैयार करना

तने द्वारा पौध तैयार करने के लिए एक वर्ष पुरानी पौधों को चुनते हैं। तने में जड़ बनाने के लिए पहले तने को छोटे–छोटे टुकड़ों में इस प्रकार काटते हैं कि प्रत्येक टुकड़े में 2–3 गाँठ रहे। सितम्बर

शोध छात्र, सब्जी विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या–224229 (उ0प्र0)

अक्टूबर के महीने में इन टुकड़ों को नर्सरी बेड या आधे कि.ग्रा क्षमता की पॉलीथीन के थैलियों में लगाते हैं। इससे पहले पॉलीथीन की थैलियों को सड़ी हुई गोबर की खाद, बालू एवं मिट्टी की बराबर मात्रा में मिश्रण से भर लेते हैं। रोपाई हेतु पौध 2–3 महीने में तैयार हो जाते हैं।

पौध रोपाई का समय एवं विधि

परवल लगाने का अच्छा समय मेघा नक्षत्र है जो 15 अगस्त के आस–पास होता है। नदियों के किनारे दियारा में परवल लगाने का समय अक्टूबर–नवम्बर का महीना (जब बाढ़ समाप्त हो जाय) उत्तम माना जाता है। दियारा क्षेत्र में प्रत्येक वर्ष नई फसल लगानी पड़ती है क्योंकि बाढ़ से फसल नष्ट हो जाती है। रोपाई 60–70 से.मी लम्बे तने का चुनाव 1 साल पुरानी पौध से करके पत्तियों को निकाल देते हैं। इसके बाद अंग्रेजी के अंक 8 की आकृति में मोड़ देते हैं। इसके मुड़े हुए बीच वाले भाग को पहले से तैयार थाले में लगा देते हैं। दूसरी विधि से तने को रिंग बनाकर मिट्टी के अन्दर दबा देते हैं। इस प्रकार एक हैक्टर क्षेत्रफल में 2500 पौधे/कलमें लगती हैं। पॉलीथीन में तैयार पौधों को लगाने का उचित समय फरवरी का महीना होता है। तैयार पौध की पॉलीथीन हटाकर पिण्ड सहित बने हुए गड्ढे में लगाकर मिट्टी से चारों तरफ दबा देते हैं। पौध लगाने के बाद 3–4 दिन तक हल्की सिंचाई करते हैं, जिससे पौध स्थापित हो सके। परवल की जड़ों का प्रयोग लगाने के लिए भी करते हैं। इन जड़ों को लगाने का समय अक्टूबर–नवम्बर या फरवरी है।

नर व मादा पौधों का संतुलन

परवल में नर व मादा पुष्प अलग पौधे पर लगते हैं, अतः अच्छी उपज के लिए खेत में नर व मादा पौधों का संतुलन बनाये रखना चाहिए। पहचान के लिए मादा फूल का निचला भाग फूला हुआ सफेद और रोयेंदार होता है जबकि नर पुष्प सीधा व लम्बा होता है। अच्छी उपज के लिए प्रत्येक 10 मादा पौधों के साथ एक नर पौधे का होना आवश्यक है। नर पौधे को खेत में प्रत्येक 10 मादा पौधों के बाद लगाना चाहिए जिससे उचित रूप से परागण हो सके।

सिंचाई एवं जल निकास

परवल के कर्तनों के अच्छी प्रकार स्थापित होने एवं विकास हेतु लता लगाने के तुरन्त बाद थालों के पास हल्का पानी देना चाहिए। इस प्रकार पानी देने की प्रक्रिया लगातार कई दिनों तक करनी चाहिए। इससे जड़ें जल्दी निकलती हैं। सामान्यतः गर्मी के महीनों (मार्च से जून) को छोड़कर अन्य महीनों में पानी की आवश्यकता नहीं पड़ती है। गर्मी के दिनों में जब पौधों पर कल्ले विकसित होते हैं, पानी की ज्यादा आवश्यकता पड़ती है। इस प्रकार इन महीनों में 7–8 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए। पुष्पन व फलन के समय खेत में उचित नमी रहने पर उपज बढ़ जाती है। पाले से बचाने के लिए खेत को नम रखना चाहिए। परवल से अधिक उपज के लिए खेत में जल निकास का उचित प्रबन्धन होना चाहिए। परवल की लताएं, जल जमाव के कारण शीघ्र ही सड़कर नष्ट हो जाती है। प्रयोगों में यह पाया गया है कि जल निकास की अच्छी व्यवस्था न होने के कारण जब पानी बार बार खेत में रूकता है तो फूल झड़ने लगते हैं और विकसित हो रहे फल पीले होकर गिर जाते हैं।

निराई, गुड़ाई एवं खरपतवार नियंत्रण

अन्य सब्जियों की अपेक्षा परवल, खरपतवार के प्रति बहुत संवेदनशील होता है। प्रायः गर्मी की सिंचाई के बाद और वर्षा ऋतु में खरपतवार ज्यादा उग जाते हैं। लताओं की रोपाई करने के बाद से फल लगने की अवधि तक आवश्यकतानुसार 5 से 7 निराई–गुड़ाई करके खेत को खरपतवार मुक्त रखना चाहिए। जमीन पर फैलाई गई फसल में जब फसल हो रही हो तो हाथ से खरपतवार 4–5 बार निकालना चाहिए। निराई–गुड़ाई करके थालों पर मिट्टी चढ़ा देने से पौधों की लताएं तेजी से विकसित होती है। रासायनिक विधि से खरपतवार नियंत्रण के लिए स्टाम्प 3.3 लीटर मात्रा को 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से पौध लगाने के 2 दिन पूर्व छिड़काव करना चाहिए। इससे विस्तृत क्षेत्र में तथा कम लागत में खरपतवार नियंत्रण हो जाता है।

फल की तुड़ाई एवं उपज

मैदानी क्षेत्रों में मार्च–अप्रैल के महीने में फल आने शुरू हो जाते हैं जबकि नदियों के किनारे दियारा में लगाए गये पौधों पर फल फरवरी में ही आते हैं। पौधों पर फल लगने के 15 से 16 दिन बाद पूर्ण विकसित हरे फलों की तुड़ाई करनी चाहिए। समय से फलों की तुड़ाई करते रहने से फल अधिक संख्या में लगते हैं। फलों की तुड़ाई 2–3 दिन के अंतराल पर करते रहने से फल कोमल व गुणवत्तायुक्त प्राप्त होते हैं। पहले वर्ष औसतन उपज 125 कुन्तल, दूसरे व तीसरे वर्ष 250–300 कुन्तल/हैक्टर प्राप्त होती है।

मिर्च की उत्पादन तकनीक

मनोज कुमार सिंह, राम लखन सिंह एवं पी के मिश्रा

मिर्च, भारत की प्रमुख मसालों वाली फसलों में एक है। मिर्च की व्यवसायिक खेती करने से अधिक लाभ कमाया जा सकता है। प्रायः सभी लोग कम या ज्यादा मात्रा में मिर्च का प्रयोग अवश्य करते हैं। अधिक तीखी (चरपरी), हरी या लाल मिर्च मसालों के रूप में, तथा मध्यम चरपरी लाल मिर्च अचार बनाने में प्रयोग की जाती है तथा भारत, मिर्च का सबसे बड़ा निर्यातक भी है।

उन्नतशील प्रजाति

मुक्त परागित

एल.सी.ए. 235:– इस किस्म के पौधें सघन, छोटी–छोटी गाँठो वाले छातानुमा होते हैं। पत्तियाँ छोटी, फल 5–6 सेमी., लम्बे नुकीले, गहरे हरे रंग के काफी चरपरे होते हैं। हरी सब्जियों के साथ प्रयोग करने के लिए यह उपयुक्त किस्म है। अचार बनाने व निर्यात के लिए भी यह उपयुक्त किस्म है। इसके हरे फलों की पैदावार 75–400 कुन्तल तथा सूखे फलों की 37 कु0/है0 होती है।

के.ए.2:– इस किस्म के पौधें छोटे होते हैं तथा फल नीचे की तरफ लगतें हैं। हरे फल के उत्पादन के लिए यह अच्छी किस्म है। इस किस्म में फलों की तुड़ाई 3–4 बार में समाप्त हो जाती है। हरे फल का उत्पादन लगभग 200 कु०/है0 तथा सूखे फलों की पैदावार 60 कु०/ है0 होता है। इसकी फसल के बाद गेहूँ आसानी से बोया जा सकता है। इस किस्म के पौधों की रोपाई 45 गुणा 45 सेमी० पर करनी चाहिए।

पूसा ज्वाला– इस किस्म के पौधे छोट, झाड़ीनुमा, पत्तियाँ तथा फल हलके हरे (पीलापन) रंग के, फल 10–12 सेमी0 लम्बे, पतले तथा अधिक चरपरे होते हैं। फल पकने के बाद लाल रंग के जो सूखने पर टेढ़े–मेढ़े हो जाते हैं। इसके हरे फलों की पैदावार लगभग 190 कु0/ है0 तथा सूखे फलों की पैदावार लगभग 54 कु0/ है0 होती है।

पूसा सदाबहार:– इसके पौधें सीधे 60–80 सेमी0 लम्बे, खडे सामान्य किस्मों की अपेक्षा अधिक लम्बी व चौड़ी होती है। फल 6–4 के गुच्छों में लगते हैं तथा फल का निचला हिस्सा ऊपर की तरफ मुड़ा होता है। फल आकार में 6–8 सेमी0 लम्बे तथा 3.4 से 4.0 मिमी0 मोटाई के होते हैं। इस किस्म की मुख्य विशेषता यह है कि एक बार पौधा लगा देने पर 2–3 वर्षों तक फल मिलते रहते हैं। इसके हरे फलों की पैदावार 10–20 कु0/ है0 तथा सूखे फलों की पैदावार लगभग 40 कु0/ है0 होती है।

संकर किसमें

तेजस्वनी:– इसकी फलियाँ मध्यम आकार की तथा गहरे हरे रंग की होती है। यह एक अच्छी ऊपज देने वाली किस्म हे। यह उपयुक्त दशाओं मे 300 क्विंटल तक हरे फल देती है।

भूमि और भूमि की तैयारी:– इसकी अधिक उपज के लिए बलुई दोमट व दोमट भूमि अच्छी पायी गयी है। ऐसी मिट्टी जिसका पी.एच. मान 6 से 7.5 के बीच हो, खेती के लिए उपयुक्त होती है। खेत की दो–तीन जुताई करके पाटा लगा देते है ताकि खेत की मिट्टी भुरभुरी हो जाये।

बुआई:– अच्छी पैदावार प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि मिर्च की बुआई उपयुक्त समय से करें। उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में पौधशाला में बीज की बुआई का उपयुक्त समय जून–जुलाई तथा रोपड़ का उचित समय जुलाई–अगस्त है।

बीज की मात्रा:– एक हेक्टेयर खेत में मिर्च की खेती के लिए 200–350 ग्राम बीज की आवयकता होती है।

पौधशाला में बीज की बुआई:– मिर्च के बीज की सर्वप्रथम पौधशाला में बुआई करके पौध तैयार कर लेते हैं। तत्पश्चात पौध तैयार होने पर इनका रोपण मुख्य खेत में करते हैं। बीज शैय्या के लिए जीवांशयुक्त मिट्टी काफी उपयुक्त होती है। अतः मिट्टी में गोबर या कम्पोस्ट की खाद डालकर अच्छी प्रकार मिला दें। अच्छी पौध तैयार करने के लिए प्रति वर्ग मीटर की दर से 10 ग्राम डाई अमोनिया फास्फेट और 1 किलो सड़ी हुई गोबर की खाद मिला दें। बीजों को ऊँची उठी हुई क्यारियों में डालना उचित होता हे। क्यारियाँ जमीन की तरह से 20–25 सेमी0 उठी होनी चाहिए। क्योरियों की लम्बाई 3 मीटर तथा चौड़ाई तथा 1 मीटर रखते हैं। साधारणतया यह देखा गया है कि बीज चाहे पंक्ति में बाये गये हों या छिटककर यदि घने रहते है तो आर्द्रगलन बीमारी का प्रकोप अधिक होता है। अतः बुआई अधिक घनी नहीं करनी चाहिए। पंक्ति में बुआई के लिए, एक पंक्ति से दूसरे पंक्ति की दूरी क्यारी की

कृषि विज्ञान केन्द्र मनकापुर, गोण्डा–।।, आ0 न0वदे0कृ0एवं प्रौ0वि0वि0, कुमारगंज, अयोध्या

लम्बाई के लम्बी या चौड़ाई के समानान्तर 5–6 सेमी0 रखें व इन्हीं पंक्तियों में बीज की बुआई करें। बीज बुआई के बाद क्यारियों को सड़ी हुई गोबर की खाद या पत्ती की खाद (कम्पोस्ट खाद) से ढक दें जिससे ऊपर की मिट्टी बहने न पायें। तत्पश्चात फुआरें से हल्की सिंचाई करें। अब इन क्यारियों को धूप व ठंड से बचाने के लिए घास–फूँस की छप्पर या सरकण्डे से ढक दें। जब बीज पूर्णतया जम जायें तो घास–फूँस हटा लें तथा आवश्यकतानुसार फुहारे से सिंचाई करते रहें, एक सप्ताह के अन्तराल पर बीज शैय्या में पौधों को डायथेन एम.–45 या थिरम,/मैंकोजेब के 0.2 प्रतिशत घोल (2 ग्राम दवा प्रति लीटर पानी) से उपचारित करें। लगभग 4 सप्ताह में पौध रोपण योग्य तैयार हो जाती है।

रोपण एवं दूरीः– जहाँ तक हो सके मिर्च के पौधों को रोपण शाम के समय करना चाहिए। साफ मौसम या तेज धूप के समय रोपण करने से पौध अच्छी प्रकार अपनी वृद्धि नहीं कर पाते। रोपण के बाद पौधों को फुहारें की सहायता से दो–तीन दिनों तक सुबह शाम सिंचाई करें। मिर्च में रोपण के लिए उचित दूरी ऋतुओं और किस्मों के अनुसार अलग–अलग होती है। साधारण तोर पर मिर्च की रोपाई पंक्ति से पंक्ति 45–45 सेमी. व पौध से पौध 30–45 सेमी. रखना चाहिए।

खाद एवं उर्वरकः– मिर्च की पैदावार प्रयुक्त खाद एवम् उर्वरकों की मात्रा व किस्म पर निर्मर करती है। अच्छी उपज के लिए 25–30 टन प्रति हेक्टेयर सड़ी गोबर की खाद खेत की तैयारी के समय खेत में मिलावें तथा तत्व के रूप में 400–420 किलोग्राम नाईट्रोजन, 40–60 किग्रा०0 फास्फोरस, 30–50 किग्रा0 पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए। नाइट्रोजन की आधी या फास्फोरस व पौटाश की पूरी मात्रा रोपण से पहले दें तथा शेष नाइट्रोजन को दो भागों में बाँटकर रोपण से 25 व 45 दिनों बाद खड़ी फसल में डालें।

मिर्च में बायोफर्टीलाईजर का प्रयोग अच्छा पाया गया है। एजेटोवेक्टर या एजोस्पाईरीलिपम से बीज उपचारित करने पर बढ़ी उपज प्राप्त हुई है। इसके लिए 2 किग्रा0 एजोस्पाईरीलियम को 20 किग्रा कम्पोस्ट में मिलाकर भूमि मे डालते हैं।

सिंचाईः– पौध रोपण के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई करना अत्यन्त आवश्यक है। उसके बाद आवश्कतानुसार सिंचाई करना चाहिए। मिर्च में पानी की मात्रा मिट्टी की किस्म, क्षेत्र में होने वाली वर्षा की मात्रा और उगाई जाने वाली किस्म करना चाहिए। मिर्च में पानी की मात्रा मिजुओ की किस्म, क्षेत्र में होने वाली वर्षा की मात्रा और उगाई जाने वाली किस्म पर निर्भर करती है। यदि वर्षा कम हो रही हो तो 10–15 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करनी चाहिए। गर्मी के महीनों में सिंचाई एक सप्ताह के अन्तराल पर करें। ध्यान दें कि वर्षा का पानी खेत में ज्यादा समय तक न रहें अन्यथा पौधे मर जाते हैं।

अन्तः शस्य क्रियाएँः–

सिंचाई करने के बाद मिर्च की खेत में अनेकों प्रकार के खरपतवार उग आते हैं अतः समय–समय पर निकाई करते रहना चाहिए। भूमि में हवा का आवागमन सुचारू रूप से होता रहे इसके लिए सिंचाई के बाद हल्की गुड़ाई करके पौधें की जड़ों के पास मिट्टी चढ़ा दें। सिंचाई के दौरान यह ध्यान रखें कि पानी जड़ों तक न पहुँचें और पूरी मिट्टी बैठने न पावें। स्टाम्प 33. लीटर 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर रोपण से पूर्व खेत में प्रयोग करने से खरपतवार नहीं उगते हैं व अच्छी उपज होती है।

तुड़ाईः–

हरी मिर्च के लिए तुड़ाई हफल लगने के 45–20 दिन बाद कर सकते हैं। परन्तु यदि सूखी लाल मिर्च के लिए तुड़ाई करनी हो तो एक या दो बार हरी मिर्च की तुड़ाई करके मिर्च पौध पर ही पकने के लिए छोड़ दी जाती है। इससे फूल बहुलता से आते हैं और पैदावार भी ज्यादा मिलती है। एक तुड़ाई से दूसरे तुड़ाई का अन्तराल 5–20 दिन तक रखते हैं। फलों की तुड़ाई उनके पूर्ण विकसित होने पर ही करनी चाहिए।

प्रमुख कीट व रोग :–

थ्रिप्सः– इस कीट के शिशु तथा वयस्क दोनो पत्तियों से रस चूसकर नुकसान पहुचाते हैं। वयस्क कीट का पंख कटा–फटा होती है। प्रौढ़ कीट 4 मिमी0० से कम लम्बा होता है। यह कोमल हल्के पीले भूरे रंग का होता है। एक मादा 50–60 अण्डे देती है। इसके प्रकोप से पत्तियाँ सूख जाती है जिसका असर प्रतिकूल फसल की पैदावार पर होता है।

नियंत्रणः– मिर्च के बीज को गाऊचों (70 डब्लू एस.) 2.5 ग्राम प्रति किग्रा0 बीज की दर से उपचारित कर पौधशाला में बुआई करें। मुख्य खेत पर कानफिडोर 200 एस.एल. का 0.3 मिली0 प्रति लीटर पानी के साथ घोल बनाकर छिड़काव करें। फल लगने से 30 दिन पहले कानफिडोर का प्रयोग बन्द कर देना चाहिए। रोगार 4.5 मिली0 प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 45 दिन के अन्तराल पर छिड़कने से भी श्रिप्स का नियंत्रण सम्भव है। इसव दवा का प्रयोग फूल लगने के

लगभग 0 दिन पहले बंद कर देना चाहिए।

पीली माइटः— यह पीले रंग की छोटी माइट है इसकी पीठ पर सफेद धारियाँ होती है। यह आकार में इतनी छोटी होती है जो आसानी से दिखाई नहीं देती। इसके प्रकोप से होने पर पर्ण कुंचन रोग (लीफ कर्ल) की तरह पत्तों में सिकुड़ाव आ जाता है। इस कीट के शिशु तथा प्रौढ़ दोनो ही पत्तियों का रस चूसकर हानि पहुँचाते हैं। इसके अत्यधिक प्रकोप होने पर पौधों की बढ़वार एकदम रूक जाती है, और फूलने—फलने की क्षमता प्रायः समाप्त हो जाती है।

नियंत्रणः— डायकोफाल 48.5 ई.सी. का 25 मिली0 को प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर या सल्फर धूल (0 प्रतिशत धूल) का 20—25 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से 5 दिन में अन्तराल पर बुरकाव प्रभावकारी पाया गया है।

शीर्षमरण रोग (डाइबैक) एवं फल सड़न— इस रोग में पौधें का ऊपरी भाग सूखना प्रारम्भ होता है और नीचे तक सूखता जाता है। प्रारम्भिक अवस्था में यह टहनियाँ गीली होती है और उस पर रोऐदार कवक दिखाई देती है। रोगग्रसित पौधों के फल सड़ने लगते हैं। लाल फलों पर इस रोग का प्रकोप अधिक होता है।

नियंत्रणः— इससे बचाव के लिए कार्बेन्डाजिम 2.5 ग्राम दवा प्रति किलो ग्राम बीज की दर से उपचारित करके बोयें। क्षतिग्रस्त टहनी को सुबह के समय कुछ नीचे से काट कर इकटठा कर लें एवं जला दें। डाइफोल्टान (2 ग्राम दवा प्रति लीटर पानी) तथा कार्बेन्डाजिम 1.0 प्रतिशत (1 ग्राम/लीटर पानी) घोल का छिड़काव बारी—बारी करें।

(पृष्ठ 04 का शेष)

प्रयोग करें। इनका 10 से 15 दिनों के अंतराल पर दो बार छिड़काव करना चाहिए। कार्बेन्डाजिम 1.0 कि.ग्रा. या प्रोपिकोनाजोल 500 मि.ली. या हेक्साकोनाजोल 1. 0 लीटर मात्रा का 500—600 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करना चाहिए। बचाव खेतों से फसल अवशेषों को नष्ट कर देना चाहिए, प्रक्षेत्रों पर फसल को खरपतवारों से मुक्त रखना चाहिए। साथ ही साथ मेड़ों की सफाई अवश्य करें, संतुलित उर्वरक का प्रयोग करना चाहिए, नाइटोजन उर्वरकों को दो या तीन बार में देना चाहिए,

बचाव के उपाय — धान की रोगरोधी प्रजातियों का चयन करें, शुद्ध एवं असंक्रमित बीजों का ही प्रयोग करें और मुख्य खेत वं मेड़ों को खरपतवार से मुक्त रखें।

खैरा रोग — यह रोग जिंक की कमी के कारण होता है। इस रोग में पत्तियां पीली पड़ जाती हैं जिस पर बाद में कत्थई रंग के धब्बे बन जाते हैं। इसके नियंत्रण के लिए जिंक सल्फेट 20—25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से बुआई/रोपाई से पूर्व आखिरी जुताई पर मृदा में मिलाकर देने से खैरा रोग का प्रकोप नहीं होता है। खड़ी फसल में लक्षण दिखाई पड़ने पर 5 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट, 20 कि.ग्रा. यूरिया अथवा 2.50 कि.ग्रा. बुझे हुए चूने को प्रति हैक्टर 1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करके खैरा रोग को नियंत्रित करते हैं।

सामान्य धान की अपेक्षा महंगा है काला धान— काला धान सामान्य धान की अपेक्षा कई गुना महंगा बिकता है। बाजार में इसका चावल 300 से लेकर 500 रुपये किलो तक है, तो वहीं विदेशों में भी इस चावल की काफी मांग है। हालांकि इसकी पैदावार सामान्य धान की तुलना में काफी कम है, लेकिन इसका रेट अधिक होने के कारण किसानों के लिए बेहतर मुनाफे का सौदा है। धान उत्पादक देशों में भारत का नाम काफी आगे है। भारत में धान का उत्पादन मुख्य रूप से पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, बिहार, छत्तीसगढ़, आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, पंजाब, ओडिशा से किया जाता है। इनके अलावा और भी कई राज्यों में छोटे स्तर पर धान की खेती की जाती है। भारत में हर साल करीब 37 मिलियन हेक्टेयर में होने वाली धान की खेती से 100 से 150 मिलियन टन चावल की पैदावार होती है। भारत में चावल की अच्छी पैदावार और खपत के साथ—साथ बड़े स्तर पर इसका निर्यात भी किया जाता है।

सरकार दे रही उत्पादन पर बढ़ावा— भारत सरकार ने कृषि और प्रसंस्कृत उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (अपेडा) के माध्यम से काला नमक चावल को बढ़ावा देने के लिए किसानों और हितधारकों के क्षमता निर्माण कार्यक्रम, कृषि निर्यात खेती, "काला नमक महोत्सव" का आयोजन, किसान उत्पादक संगठन फ पी ओ, निर्यातकों और किसानों के साथ समन्वय जैसी पहल की है। साथ ही देश के अलग—अलग कृषि अनुसंधान संस्थानों के माध्यम से काला नमक चावल पर अनुसंधान एवं विकास कार्य किए जा रहे हैं।

ऊसर मृदाएँ एवं उनका प्रबंधन

अजय बाबू*, प्रदीप कुमार मिश्रा** एवं राजीव कुमार सिंह***

कृषि खाद्य संगठन के अनुसार विश्व मे ऊसर मृदाओं का क्षेत्रफल लगभग ६५२ मिलियन हेक्टेयर हैं वही अगर हम भारत की बात करें तो इसका क्षेत्रफल ७.० मिलियन हेक्टेयर हैं। ऊसर संस्कृत शब्द से विकसित हुआ हैं जिसका अर्थ होता हैं अनुपयुक्त भूमि। ऊसर शब्द सभी प्रकार लवणीय, क्षारीय एवं लवणीय–द्षारीय मृदाओं के लिए प्रयोग किया जाता हैं उत्तरी भारत मे इन भृदाओ को कुछ अन्य नामो से जाना जाता हैं जैसे लोना, शोरा, रेह, रेहता और आम भाषा में रेह कहा जाता है। ऊसर भूमियों में घुलनशील लवणों या विनिमय सोडियम की अधिकता पाई जाती है और ये घुलनशील लवण वाष्पीकरण प्रक्रिया द्वारा धरातल पर एकत्र हो जाते हैं जिसके परिणाम स्वरूप मिट्टी की ऊपरी सतह सफेद दिखाई पड़ने लगती है। मृदा घोल में इन लवणों की सांद्रता बढ़ जाने के कारण पौधे मिट्टी से जल तथा पोषक तत्वों को सुगमता से नहीं ले पाते हैं जिसका पौधों पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है। सोडियम की अधिकता से मृदा की भौतिक दशा अत्यंत खराब हो जाती है और साथ ही मृदा का पीएच मान भी काफी बढ़ जाता है जो पौधों के लिए जानलेवा साबित होता है अतः ये मृदाएं कृषि के लिए अत्यन्त निम्न कोटि की मानी जाती हैं।

इस प्रकार ऊसर मृदाओं को उनके भौतिक एवं रासायनिक गुणों के आधार पर मुख्यतः तीन वर्गों में विभाजित किया गया है।

लवणीय मृदाएं

लवणीय मृदाओं की उत्पत्ति उन स्थानों पर होती हैं जहां वर्षा की अपेक्षा वाष्पन अधिक होता है और वाष्पन अधिक होने के कारण लवण सतह पर एकत्रित हो जाते हैं इसमें मुख्यतः क्लोराइट सल्फेट नाइट्रेट की अधिकता पाई जाती हैं। लवणीय मृदाओं की भौतिक दशा कैल्शियम की पर्याप्त मात्रा होने के कारण अच्छी रहती हैं किन्तु जल में घुलन शील लवणों की अधिकता होने से पौधें जल एवं पोषक तत्वों का अवशोषण आसानी से नहीं कर पाते हैं इस प्रकार उनकी वृद्धि रूक जाती हैं।

तालिका 1: भारत में ऊसर मृदाओं का विवरण

राज्य	क्षेत्रफल (मिलियन हे.)	राज्य	क्षेत्रफल (मिलियन हे.)	राज्य	क्षेत्रफल (मिलियन हे.)
उत्तर प्रदेश	1.32	पंजाब	0.68	कर्नाटक	0.40
पश्चिम बंगाल	0.58	महाराष्ट	0.53	मध्य प्रदेश	0.22
राजस्थान	0.72	हरियाणा	0.52	आंध्र प्रदेश	0.042
गुजरात	1.21	ओडिसा	0.40	अन्य राज्य	0.040

(तालिका 2: ऊसर मृदाओं के भौतिक एवं रसायनिक गुण

मृदा के गुण	ऊसर मृदाएँ		
	लवणीय	लवणीय–क्षारीय	क्षारीय
पी एच	< 8.5	< 8.5	< 8.5–10
ई.सी. (डे.सी./ मी.)	> 4	> 4	> 4
विनिमय सोडियम प्रतिशत	< 15	< 15	< 15
प्रबलता से पाए जाने वाले लवण	कैल्शियम के सल्फेट क्लोराइड एवं नाइट्रेट	–	सोडियम कार्बोनेट
सोडियम अवशोषण अनुपात	> 13	> 13	> 13
कुल घुलनशील लवण सान्द्रता (प्रतिशत)	> 1	> 1	> 1
श्रंग	सफेद	–	काला
भौतिक दशा मृदा	मृदा कण संगठित	सोडियम लवणों के आधार पर मृदा कण संगठित	असंगठित मृदा कण

*विषय वस्तु विशेषज्ञ (मृदा विज्ञान), **वरेष्त वैज्ञानिक (वानिकी), कृषि विज्ञान केन्द्र, मनकापुर–गोण्डा–।।

***विषय वरतु विशेषज्ञ (उद्यान) कृषि विज्ञान केंद्र बक्शा जौनपुर

तालिका 3: ऊसर भूमि के लिए लवण सहनशील फसलें

उच्च सहनशील फसलें	मध्यम सहनशील फसलें	संवेदनशील फसलें
धान	गेहूँ	चना
गन्ना	सरसों	मूँगफली
जौ	मक्का	मूँग
जई	बाजरा	लोबिया
मेथी	ज्वार	सेम
लहसुन	कपास	मटर
ढैंचा	अरंडी	
चुकुन्दर	बरसीम	

लवणीय क्षारीय मृदाएं

यह ऊसर मृदाओं का दूसरा चरण है क्यूंकि ये गृदाएं लवणीय मृदाओं से ही विकसित होती हैं अतः इन मृदाओं में घुलनशील लवणों की अधिकता होने के कारण लवणीय मृदाओं के समान दिखाई पड़ती हैं जब ये लवण किसी प्रकार निक्षालित होकर मृदा की निचली सतहों में मे चले जाते हैं तो मृदा के भौतिक गुण बदल जाता हैं तथा यह क्षारीय मृदाओं के समान सल्फेट गुण प्रदर्शित करने लगती हैं इस प्रकार के मृदओं को दो प्रकार से विभाजित किया जाता है
कार्बोनेट टाइप और
टाइप मृदाएं।

क्षारीय मृदाएं

क्षारीय मृदाओं में मुख्यतः क्लोराइड सल्फेट कार्बोनेट बाइकार्बोनेट एवं कभी–कभी नाइट्रेट आयन पाए जाते हैं सोडियम संतृप्त कैल्शियम मुक्त मृदाओं का कार्बन डाइऑक्साइड युक्त जल के साथ निक्षालन कराने पर जो निक्षालित द्रव प्राप्त होता है उसमें सोडियम बाई कार्बोनेट की अधिकता होती है। अधिकांश क्षारीय मृदाओं में सोडियम कार्बोनेट के रूप में एवं सोडियम बाई कार्बोनेट का निर्माण संभवत इसी विधि से होता है।

ऊसर मृदाओं में उगाए जाने वाली फसलें

इस प्रकार मृदाओं में बुवाई करने हेतु सही फसलों का चुनाव करना अति महत्वपूर्ण होता हैं। फसल चुनाव करते समय ध्यान देना चाहिए कि जो फसल लेना हैं वह लवण के प्रति सहनशील हो। आज कल फसलों की बहुत सी किस्में विकसित की जा चुकी हैं जिनसे ऊसर भूमि में भी उचित प्रबंधन के साथ उत्पादन में लिया जा सकता हैं।

ऊसर मृदा की सुधार विधि

ऊसर मृदा सुधारने के लिए स्थायी रुप से निम्न बातों पर ध्यान रखना चाहिए।
भूमि को लवणीय एवं क्षारीय होने से बचाना।
क्षतिग्रस्त मृदाओं का भली भाँति सुधार करना।
जड़ों के आस पास से लवणों तथा क्षारों को यथा साम्भव दूर कर देना।

मेड़बंदी करना

इस दिधि से खेत के चारो और मजबूत मेड़ बनाये जाते हैं। तत्पश्चात उरामें पानी भर दिया जाता हैं अथवा वर्षा का जल एकत्रित होने दिया जाता हैं जिसके परिणाम स्वरुप घुलनशील लवण मृदा के निचली सतह पर चला जाता हैं।

समतलीकरण

यह ऊसर भूमि के सुधार की एक महत्वपूर्ण विधि हैं। यदि जमीन समतल नहीं हैं या उबड़ खाबड़ हैं तो खनिज लवण या जैव पदार्थ कही कही पैच में एकत्रित हो जाते हैं। इस प्रकार एक उपजाऊ भूमि में जगह–जगह पर ऊसर भूमि बन जाता है जिसका सुधार बहुत ही कठिनाई से हो पाता हैं।

निक्षालन

इस विधि का प्रयोग लवणीय एवं क्षारीय दोनों प्रकार की मृदाओं में सुगमता पूर्वक किया जाता हैं। लवणीय मृदाओं में निक्षालन जल निकास का समुचित प्रबंधन करके किया जाता हैं परन्तु क्षारीय मृदाओं में निक्षालन के पूर्व किसी सुधार (जिप्सम और पायराइटस) का प्रयोग करना अति आवश्यक होता हैं परन्तु इस क्रिया से एक हानि हैं कि फसलों के आवश्यक तत्व जैसे नाइट्रोजन, फॉस्फोरस एवं मैग्नीज की मृदा में कमी हो जाती हैं।

जल निकास

जैसा की हम जानते हैं मृदा में लवणों की उत्पति में सबसे अधिक योगदान जल निकास का अवरुद्ध होना

(शेष पृष्ठ 15 पर)

लेजर लैंड लेवलिंग खेत को बनाएं समतल, पानी-खाद और ईंधन की करें बचत

देवेश कुमार* एवं अरविन्द कुमार सिंह**

लेजर लैंड लेवलर लेजर लैंड लेवलर को लेजर समतल भी कहा जाता है। यह मशीन किसानों के लिए बेहद उपयोगी है। विशेषकर ऐसे किसानों के लिए जिनके खेत पूर्ण रूप से समतल नहीं है, उबड़–खाबड़ है, जिससे उन्हें फसल बोने, उर्वरक व पानी देने आदि कार्यों में काफी परेशानी होती है। ऐसे खेतों को खेती लायक बनाने का काम इस लेजर लैंड लेवलर मशीन की सहायता से किया जाता है। इस मशीन का काम भूमि को समतल बनाना है ताकि उस भूमि पर खेती करना आसान हो जाए। लेजर लैंड लेवलर से खेत को समतल बनाया जाता है। इससे फायदा यह होता है कि खेत में खड़ी फसल में समान रूप से सिंचाई होती है जिससे पानी की बचत होती है। इसके साथ ही खाद और ईंधन की भी बचत होती है। आज हमारे पास जो भी भूमि उपलब्ध है उसके समतलीकरण द्वारा हम संसाधनों की बचत कर सकते हैं।

लेजर लैंड लेवलर के लाभः– खेत के विभिन्न हिस्सों में पानी का एक समान उपयोग परिचालन लागत को कम करता है।

लेजर लेवलर द्वारा भूमि समतल करने से पानी का अधिकतम उपयोग होता है और 25 से 30 प्रतिशत तक पानी की बचत कर देता है। इसलिए सिंचाई में लगने वाली ऊर्जा (डीजल और बिजली) में बचत करता है।

इसके परिणामस्वरूप 3 से 4 प्रतिशत अतिरिक्त भूमि की वसूली (Additional Land Recovery) होती है।

भूमि समतल करने से खरपतवार की समस्याओं (धान के लिए 40 प्रतिशत तक) को भी कम करता है। काम को तेजी से किया जा सकता है, और निराई गुड़ाई की लागत को भी कम किया जा सकता है।

परंपरागत समतलीकरण में जहाँ 5–10 सेमी का औसत विचलन होता है की तुलना में लेजर निर्देशित भूमि समतलीकरण में अधिकतम 1–2 सेमी का ही औसत विचलन होता है

जल प्रयोग दक्षतामें 50 प्रतिशत तक की वृद्धि करता है।

पैदावार में 10 से 15 प्रतिशत तक की बढ़ोत्तरी की बचत करता है।

पूरे खेत में पानी की सही से निकास और पानी का स्तर एक समान होने से धान में खरपतवार दवाईयों का ज्यादा असर पोषक तत्वों और उर्वरक का एक समान प्रसार होते है।

सभी तरफ से खेत समतल होने से बुवाई का काम सरलता व तेजी से किया जा सकता है।

समतल खेत में बीजों का अंकुरण अच्छा होता है जिससे फसल अच्छी होती है।

पोषक तत्वों व उरर्वक को एक समान खेत में दिया जा सकता है।

निराई–गुड़ाई के काम में कम समय लगताहै जिससे लागत को कम किया जा सकता है।

बीज, उर्वरक, रसायन और ईंधन की कम खपत की ओर ले जाता है

धान की बिजाई की तैयारी जैसे बढ़िया समतल संचालन के लिए उपयोग किया जाता है।

परिचालन क्षमता में सुधार होता है (ऑपरेटिंग समय को 10 से 15 प्रतिशत तक कम करता है)।

लेजर नियंत्रित सटीक भूमि समतलन फसल स्थापना में सुधार करने में मदद करता है।

लगभग 3 से 5 प्रतिशत कृषि योग्य भूमि क्षेत्र में वृद्धि करना।

जल–उपयोग क्षमताको 50 प्रतिशत तक बढ़ाना।

फसल गहनता को 40 प्रतिशत तक बढ़ाना।

फसलों की उपज में वृद्धि (गेहूं 15 प्रतिशत गन्ना 42 प्रतिशत चावल 61 प्रतिशत और कपास 66 प्रतिशत)।

सिंचाई के पानी की बचत लगभग 35–45 प्रतिशत ।

खरपतवार समस्याओं को कम करना और खरपतवार नियंत्रण दक्षता में सुधार करना

लेजर लैंडलेवलर के घटकः–विभिन्न प्रकार के घटक होते है जो निम्लि हैः

1.**लेजरट्रांसमीटरः**–लेजर ट्रांसमीटर एक लेजर बीम ट्रांसमिट करता है जिसे लेवलिंग बकेट पर लगे लेजर रिसीवर द्वारा इंटर कनेक्ट किया जाता है। ट्रैक्टर पर

*वि.व.वि. (कृषि अभियांत्रिकी), **वरिष्ट वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केंद्र, संत कबीर नगर, आ0 न0वदे0कृ0एवं प्रौ0वि0वि0, कुमारगंज, अयोध्या

लगा कंट्रोल पैनल रिसीवर से सिग्नल की व्याख्या करता है और हाइड्रोलिक कंट्रोल वाल्व को खोलने और बंद करने का कार्य करता है जो बकेट को ऊपर या नीचे करेगा। लेजर एमिटर–रिसीविंग यूनिट के ऑटो गाइडेंस के लिए 700–800मीटर (इसकी रेंज के आधार पर) के कमांड रेडियस तक 360 (डिग्री) लेजर रेफरेंस के साथ निरंतर सेल्फ–लेवल लेजर बीम सिग्नल भेजती है। ग्रेड की स्थापना के लिए लेजर उत्सर्जन संकेतक तथा कम बैटरी असेंबली और मैनुअल मोड इंडीकेटर शामिल हैं।

2. **लेजरबीमरिसीवरः** मास्ट की उचाई पर लगा लेजर रिसीवर एक डायरेक्शनल 360 (डिग्री) सें रिसीवर होता है जो लेजर रेफरेंस प्लेन की स्थिति का पता लगाता है और इसे नियंत्रण बॉक्स तक पहुंचाता है। इसके अलावा यह नियंत्रण बॉक्स (Control Box) समतल क्षेत्र को प्राप्त करने के लिए खुरचनी ब्लेड (Scraper blade) के ऊपर और नीचे की ओर गति के लिए डबल एक्चुएटिंग हाइड्रोलिक वाल्व को निर्देशित करता है।

3. **कंट्रोलबॉक्स (Control Box)** ट्रैक्टर के फेंडल पर कंट्रोल बॉक्स लगाया जाना होता है ताकि ऑपरेटरआसानी से स्विच को ऑन और ओफ कर सके और सिंगनल को देख सके। डबल एक्टिंग हाइड्रोलिक वाल्व को सक्रिय करने के लिए नियंत्रण बॉक्समें मुख्य नियंत्रण इकाई होती है। नियंत्रण बॉक्स बकेट पर लगे लेजर रिसीवर से सिग्नल प्राप्त करता है और संचालित करता है।

4. **हाइड्रोलिक वाल्व असेंबलीः** असेंबली तथा बकेट को ऊपर उठाने और कम करने के लिए हाइड्रोलिक सिलेंडर में ट्रैक्टर हाइड्रोलिक तेल के प्रवाह को नियंत्रित करती है। ट्रैक्टर के हाइड्रोलिक पंप द्वारा आपूर्ति किया जाने वाला तेल सामान्य रूप से 2000–3000 (psi pressure) दबाव पर कार्य करता है।

5. **लेजर नेत्रः** खेत के स्तर को प्राप्त करने के लिए ग्रेड सर्वेक्षण रॉड पर लेजर नेत्र लगाया जाता है। इसमें एक लेजर रिसीविंग पैनल होता है।

6. **त्रिपादस्टैण्डः** ट्रांसमीटर को रखने के लिये उपयोग में लाया जाता है जिससे हम ट्रांसमीटर और रिसीवर के सिग्नल को मैच करने में एवम ऊँचाई को घटा बड़ा सकते है।

7. **शक्ति का स्रोतः** लेजर लेवलर बकेट को खींचने के लिए ट्रैक्टर की आवश्यकता होती है। ट्रैक्टर का आकार समय की कमी और खेत के आकार के आधार पर 50–60 HP से और ज्यादा के आकार के ट्रैक्टरों का लेजर के साथ सफलतापूर्वक उपयोग किया जाता है।

8. **टूलबोक्सकिटः** लेजर लेवलर के साथ कंपनी निर्माता एक टूलकिट और दो बॉक्स देता है। इसमें लेजर लेवलर के पार्ट्स रखने होते हैं और पार्ट्स की सुरक्षा कवच का ध्यान रखा जाता है।

9. **हिचतिलरपिनः (Hitch/Tiller Pin)** लेजर लैंड लेवलर के जब वायर कलेक्शन पूर्ण हो जाए तब चालक को ध्यान देना होगा कि तिलर पिंन को निकाल कर टूल बॉक्स में रख लेना चाहिए। और जब कार्य समाप्त हो जाए तो पिन को अपनी जगह लगा देना चाहिए।

1. **फील्ड ऑपरेशन और कैलिब्रेशनः** भूमि समतलन से बड़े क्षेत्रों का उपयोग संभव हो जाता है। बड़े क्षेत्र कृषि क्षेत्र को बढ़ाते हैं और परिचालन क्षमता में सुधार करते हैं। खेत का आकार 0.1 हेक्टेयर से बढ़ाकर 0.5 हेक्टेयर करने से खेती का क्षेत्रफल 5 से 7 प्रतिशत के बीच बढ़ जाता है। कृषि क्षेत्र में यह वृद्धि किसान को कृषि क्षेत्र में फिर से आकार देने का विकल्प देती है जिससे परिचालन समय 10 से 15 प्रतिशत तक कम हो सकता है।

2.लेजर लैंड लेवलर का रखरखावः लेजर लैंड लेवलर चलाने से पहले सभी ग्रीस प्वॉइंट को भलीभाँति देख ले तथा कल्पुर्जा को भी चेक कर ले की कोई कल्पुर्जा खुला तो नहीं है अगर खुला या ढीला है। तो उसे कस दें चालक को ध्यान रखना चाहिए की लेजर लैंड लेवलर को वर्षा से बचाना आवश्यक है। चालक को बायर कनेक्शन बड़ी सावधानी से करना चाहियें ताकि वह खराब न हो सभी ग्रीसिंग प्वॉइंट के लिए केवल हैंड–हेल्डग्रीस गन का उपयोग करें। अगर ग्रीसिंग नहीं घुसती तो अच्छी तरह से साफ करें। यदि आवश्यक होतो फिटिंग बदलें। ट्रैक्टर के तेल टैंक की नियमित रूप से तेल स्तर की जाँच करें। टायर का दबाव 60 चेर्प (415 kpa) कि जाँच करें सभी पिन नट और बोल्ट की जांच करें।

एजोला पशुधन के लिए सदाबहार चारा

हनुमान प्रसाद पांडे* एवं प्रतीक सिंह**

एजोला एक छोटा जलीय फर्न (पौधा) है, जो स्थिर पानी में ऊपर तैरता हुआ होता है। भारत में मुख्य रुप से एजोला की जाति 'एजोला पिन्नाटा' पाई जाती है। यह काफी हद तक गर्मी सहन करने वाली किस्म है। यह छोटे–छोटे समूह में सघन हरित गुच्छ की तरह तैरती है। एजोला को घर में हौदी बनाकर, गड्ढ़ों और धान के खेतों में उगाया जा सकता है। कई किसान इसको टबों और ड्रमों में भी उगा रहे है। यह पौधा पानी में विकसित होकर उगाये गए स्थल पर मोटी हरी चटाई की तरह दिखने लगती है। सभी प्रकार के पशुओं के साथ–साथ एजोला मुर्गियों, मछलियों के पोषण के लिए भी बहुत उपयोगी होता है। एजोला में सभी प्रकार के खनिज तत्व जैसे कैल्शियम, आयरन, फास्फोरस, जिंक, कोबाल्ट, मैग्नीशियम तथा पर्याप्त मात्रा में विटामिन, प्रोटीन, अमीनों एसिड्स और खनिज होते है। इसको उगाने में किसानों का कोई खर्चा भी नहीं आता है और उसका लाभ भी पशुपालकों को मिलता है। इसकों पशुओं को खिलाने से दूध उत्पादन में 10–15 प्रतिशत की वृद्धि के साथ ही वसा की मात्रा भी बढ़ जाती है। एजोला को प्रतिदिन के चारे के रूप में 2–3 किलो ग्राम मिलाकर दूध देने वाले पशुओं को प्रतिदिन खिलाएं। एजोला पोल्ट्री बडड्स को भी खिलाया जा सकता है। जिससे अन्य साधारण चारा खाने वाली चिड़ियों की तुलना में उनका वजन 10–12 प्रतिशत ज्यादा होती है। जब आप किसी पशु को एजोला दे तो उसको पानी से निकालने के बाद स्वच्छ पानी में साफ कर लें और जब उसका पानी निकल जाने के बाद सूख जाए तब एजोला को पशुओं को खाने के लिए दें। एजोला पशुओं के लिए लाभकारी चारा तो है ही, साथ ही साथ यह धान की खेती में जैव उर्वरक की तरह काम करता है। धान को नाइट्रोजन की जरूरत होती है। जब हम एजोला को धान के खेत में डालते हैं तो वायुमंडल से नाइट्रोजन को मिट्टी में संग्रहित करता है।

एजोला की विशेषताएं

यह जल में तीव्र गति से बढ़वार करती है।

यह प्रोटीन आवश्यक अमीनों अम्ल, विटामिन ए, विटामिन 'बी– 42' तथा बीटा कैरोटीन, कैल्शियम, फैरस, कापर एवं मैग्नीशियम से भरपूर है। इसमें गुणवत्ता युक्त प्रोटीन व निम्न तत्व होने के कारण पशु इसे आसानी से पचा लेते हैं।

शुष्क वजन के आधार पर पोषक तत्वों की उपलब्धता इस प्रकार है–

प्रोटीन– 20–30 प्रतिशत
वसा – 20–30 प्रतिशत
खनिज तत्व – 50–70 प्रतिशत
रेशा–40–3 प्रतिशत

बायो–एक्टिव व बायो–पॉलीमर की पर्याप्त मात्रा एजोला औसतन 4.5 किग्रा. /वर्ग मीटर की दर से प्रति सप्ताह उपज देती है।

ये पशुओं का आदर्श आहार जानवरों के लिए प्रति जैविक तथा भूमि उर्वरता शक्ति को बढ़ाने का कार्य करती हैं तथा इसकी उत्पादन लागत काफी कम हैं।

रिजका एवं संकर नेपियर की तुलना में एजोला से 4–5 गुणा उच्च गुणवत्ता युक्त प्रोटीन प्राप्त होती हैं तथा इसका उत्पादन भी रिजका व नेपियर से 4–40 गुणा तक अधिक उत्पादन देता हैं।

एजोला उत्पादन तकनीकी

इसका उत्पादन अक्टूबर से मार्च के महीने तक सफलतापूर्वक किया जा सकता है। अप्रैल–मई– जून के महीने में एजोला उत्पादन काफी कम हो जाता है। लेकिन अगर छाया का इंतजाम किया जाए या मोटी नेट उसके ऊपर लगा दे तो एजोला का उत्पादन इन महीनों में भी किया जा सकता है। एजोला उगाने के लिए पांच मीटर लम्बा एक मीटर चौड़ा और आठ से दस इंच गहरा पक्का सीमेंट का टैंक बनवा लें। टैंक की लम्बाई व चैडाई आवश्यकतानुसार घटा–बढ़ा भी सकते हैं। अगर टैंक नहीं बना सकते, तो जमीन को बराबर करके उस पर ईंटों को बिछाकर टैंकनुमा गड्ढ़ा बना लें गड्ढे में 150 ग्राम मोटी पॉलीथीन को गड्ढे में चारों तरफ लगाकर ईंटो आदि से अच्छी तरह

*मृदा वैज्ञानिक, **पशुपालन वैज्ञानिक, कृषि विज्ञान केंद्र चंदौली, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कुमारगंज अयोध्या

दबा दें। गड्ढ़ा या टैंक किसी छायादार जगह पर ही बनाएं। गड्ढ़ा या टैंक में लगभग 40 किलोग्राम खेत की साफ–सुथरी छनी हुई भुरभुरी मिट्टी को डाल दें। 20 मीटर पानी में दो दिन पुराने गोबर को (4–5 किलोग्राम) एवं 20 ग्राम सुपर फास्फेट का घोल बनाकर एजोला के बेड पर डाल दें। गड्ढे या हैंक में 7–10 सेंटीमीटर पानी भर दें। (एजोला के अच्छे उत्पादन के लिए गड्ढे या टैंक में इतना पानी हमेशा रखें) एक से डेढ़ किलोग्राम मदर एजोला कल्चर को पानी में डाल दें। यह गड्ढे टैंक में एक बार डालना होता है उसके बाद यह धीरे–धीरे बढ़ने लगता है। 10–12 दिन में एजोला पानी के ऊपर फैलकर मोटी हरी चटाई सा दिखने लगता है। बारह दिन के बाद एक किलोग्राम एजोला प्रतिदिन प्लास्टिक की छन्नी से निकाला जा सकता है। सप्ताह में एक बार गोबर पानी का घोल बनाकर गड्ढे या टैंक में जरूर डालते रहें। पशुओं को खिलाने से पहले एजोला को पानी से निकालने के बाद अच्छी तरह साफ कर लें। जिससे गोबर की गंध न आए।

एजोला उत्पादन के दौरान सावधानियाँ

एजोला की अच्छी वृद्धि के लिए तापमान महत्वपूर्ण कारक है गर्मी के मौसम में एजोला को छायादार स्थान पर उगाना चाहिए।

ये फर्न तीन दिन में दुगनी हो जाती हैं।

एजोला को अच्छी बढ़वार हेतु 20–35 सेन्टीग्रेड तापमान उपयुक्त रहता है।

एजोला उत्पादन में पानी का पी.एच.– 5.5 से 7.0 के बीच होना चाहिए।

उपयुक्त पोषण जैसे गोबर का घोल बनाकर आवश्यकतानुसार डालते रहना चाहिए।

दस दिन के अन्तराल पर एक बार एजोला तैयार करने के टैंक से 25 से 30 प्रतिशत पानी ताजे पानी से बदल देना चाहिए।

6 माह के अंतराल में एक बार एजोला तैयार करने के टैंक को पूरी तरह खाली कर साफ करना चाहिए।

एजोला उत्पादन करते समय किसी प्रकार का कीटनाशी इत्यादि का प्रयोग न करें।

एजोला उत्पादन इकाई स्थापना में क्यारी निर्माण, पॉलीथीन शीट, छायादार नायलोन, जाली एवं एजोला बीज की लागत पशुपालक को प्रतिवर्ष नहीं देनी पड़ती हैं। इन कारकों को ध्यान में रखते हुए एजोला उत्पादन लागत लगभग 1 रुपये किलो से कम आंकी गयी है।

(पृष्ठ 11 का शेष)

होता हैं। अतः इन मृदाओं के सुधार एवं प्रबंध में जल निकास पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

क्षारीय मृदाओं का सुधार

क्षारीय मृदाओं के सुधार में प्रयुक्त होने वाले रसायन मुख्यतः जिप्सम लौह गंधक, पायराइटस, कैल्सियम क्लोराईट, एवं दारिक चुना पत्थर, चीनी मिलो से प्राप्त चूना आपंक, स्लैग या अम्ल भी प्रयोग में लाये जाते हैं इन रसायनों को मिटटी में 7 से 10 सेन्टीमीटर गहराई तक मिला देना चाहिए और फिर खेत में पानी भर देना चाहिए। इसके पश्चात जुलाई के प्रथम सप्ताह में घान की रोपाई करनी चाहिए।

कार्बनिक सुधार

लवणों से प्रभावित मृदाओं का कार्बनिक सुधार में मुख्यतः हरी खाद, गोबर की खाद, प्रेसमड और फसलों के अवशिष्ट धान की भूसी, जलकुम्भी इत्यादि का प्रयोग किया जाता हैं इस प्रकार कार्बनिक सुधार का प्रभाव फसलों की जाति और किस्मों पर भी निर्भर करता हैं।

हलोमिक्स जैव फार्मूलेशन

यह रसायन भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद के केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान लखनऊ के द्वारा बनाई गई जैव फार्मूलेशन हैं। इसका प्रयोग ऊसर भूमि में जिप्सम के स्थान पर किया जायेगा। हलोमिक्स जैव फार्मूलेशन का प्रयोग 100 एम एल प्रति एकड़ की दर से ऊसर मृदाओं के सुधार में किया जाता हैं।

निष्कर्ष

पैदावार की चाह में बढ़ते उर्बरको और रासायनिक दवाओं के प्रयोग से हमारी मृदाएँ ऊसर होती जा रही हैं जिससे मृदा का स्वास्थ और उत्पादन दिन प्रतिदिन गिरता जा रहा हैं। अतः ऊसर मृदाओं को सुधार कर और कुछ लवण सहनशील किस्मों को लेकर ऊसर मृदाओं में खेती किया जा सकता हैं।

भारतीय कृषि में नवीनतम् तकनीक ड्रोन से सकारात्मक बदलाव

रीतेश सिंह गंगवार* एवं हनुमान प्रसाद पाण्डेय**

क्या होगा यदि फसल खराब होने का पहले ही पता चल जाए और इसको रोकने हेतु आवश्यक कदम उठाए जा सकें? क्या भारत में कृषि क्षेत्र की समस्याओं से निपटने के लिए पारंपरिक खेती के तरीकों और कृषि–ड्रोन जैसे अभिनव समाधानों का एक संयोजन हो सकता है? क्या फसल निगरानी के क्षेत्र में ड्रोन प्रमुख खिलाड़ी बन सकते है, जिससे विफलता को कम करने की बेहतर की सम्भावना हो सकती है?

अब कृषि के विभिन्न क्षेत्रों में भी उपयोग के लिए ड्रोन तकनीक उपलब्ध है। हालांकि भारत में प्रौद्योगिकी अभी भी प्रारंभिक अवस्था में है, सरकार व कई कंपनियां कोशिश कर रही हैं कि यह भारतीय किसानों के लिए आसानी से उपलब्ध हो और कृषि उत्पादन में दक्षता बढ़ाने के लिए मददगार हो। भारत सरकार ने कृषि ड्रोन के लिए एक प्रमाणन योजना भी जारी की है जिसके लागू नियमों और विनियमों का पालन करते हुए तरल पदार्थों का छिड़काव किया जा सकता है।

कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय ने किसानों के लिये ड्रोन को अधिक सुलभ बनाने के उद्देश्य से 'कृषि मशीनीकरण पर उप–मिशन' योजना से संशोधित दिशा निर्देश जारी किये है। ये वित्तपोषण दिशा–निर्देश कृषि ड्रोन को खरीदने, किराए पर लेने और उनके निरूपण में सहायता करके इस तकनीक को किफायती बनाएंगे। योजना के प्रमुख बिंदु–

40 – 100 प्रति ात सब्सिडी: ड्रोन की खरीद हेतु अनुदान या सब्सिडी के रूप में कृषि ड्रोन की लागत का 100 प्रतिशत या 10 लाख रूपए जो भी कम हो, सब्सिडी प्रदान की जाएगी। लेकिन यह 100 प्रतिशत अनुदान केवल फार्म मशीनरी प्रशिक्षण और परीक्षण संस्थानों, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के संस्थानों, कृषि विज्ञान केन्द्रों तथा राज्य कृषि विश्वविद्यालयों तक ही सीमित होगा।

कृषि स्नातकों को सब्सिडी: कस्टम हायरिंग सेंटर्स स्थापित करने वाले कृषि स्नातक ड्रोन और उसके संलग्नकों की मूल लागत का 50 प्रतिशत खरीद के लिये 5 लाख रूपए तक का अनुदान तक प्राप्त करने हेतु पात्र होंगे।

एफपीओ या किसानों की सहकारी समिति को सब्सिडी: मौजूदा या नए ब्ळे पहले से स्थापति या किसानों की सहकारी समिति द्वारा स्थापित किये जाने वाले किसान उत्पादक संगठन और ग्रामीण उद्यमी ड्रोन किराए पर लेने के रूप में 4 प्रतिशत (अधिकतम 4 लाख रूपए) प्राप्त करने के हकदार हैं। कस्टम हायरिंग सेंटर्स (सीएचसी) से ड्रोन किराए पर लेने के लिए रू0 6000/हेक्टेयर का आकस्मिक कोष भी स्थापित किया जाएगा। सब्सिडी और आकस्मिक निधि से किसानों को सस्ती कीमत पर इस व्यापक तकनीक तक पहुंचने और अपनाने में मदद मिलेगी। कृषि यंत्रीकरण को लोकप्रिय बनाने के लिये जमीन स्तर की मुख्य एजेंसियों को जब तक प्रोत्साहन नहीं दिया जाएगा, ड्रोन के उपयोग में तेजी नहीं आएगी।

ग्रामीण उद्यमियों को उन लोगों के रूप में परिभाषित किया जाता है जिन्होंने किसी मान्यता प्राप्त बोर्ड से दसवीं कक्षा की परीक्षा उर्त्तीण की है और जिनके पास नागरिक उड्डयन महानिदेशालय द्वारा मान्यता प्राप्त संस्थान से रिमोट पायलट लाइसेंस है।

प्रदर्शन के उद्देश्य: एफपीओ ड्रोन की लागत का 75 प्रतिशत सब्सिडी प्राप्त करने के पात्र होंगे यदि उनका उपयोग केवल प्रदर्शन उद्देश्यों के लिये किया जाता है। इसके अतिरिक्त, ऐसी कार्यान्वयन एजेंसियों को 6000 रूपए/हेक्टेयर दिया जाएगा जो तकनीक प्रदर्शनों हेतु हाई–टेक हब, निर्माताओं और स्टार्ट–अप से ड्रोन किराये पर लेती है। लेकिन, यदि वे केवल प्रदर्शनों के लिये ड्रोन खरीदती हैं, तो उन्हें 3000 रूपए प्रति हेक्टेयर ही मिलेगा।

योजना का महत्व : सीएचसी/हाई–टेक हब के लिये कृषि ड्रोन की सब्सिडी के माध्यम से खरीद इस प्रौद्योगिकी को सस्ती बना देगी, जिससे उन्हें व्यापक रूप से अपनाया जा सकेगा। यह भारत में आम आदमी के लिये ड्रोन को अधिक सुलभ बना देगा और घरेलू ड्रोन उत्पादन को भी काफी प्रोत्साहित करेगा। हाल के शोध के अनुसार, कृषि के भीतर वैश्विक ड्रोन बाजार 35.9 प्रतिशत सीएजीआर से बढ़ेगा और सन् 2025 तक 5.7 बिलियन डॉलर तक पहुंच जाएगा। उद्योग के परिपक्व होने के साथ ही कृषि क्षेत्र में ड्रोन का उपयोग बढ़ने की उम्मीद है।

*विषय वस्तु विशेषज्ञ (सस्य विज्ञान), **विषय वस्तु विशेषज्ञ (मृदा विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, चन्दौली

कृषि में ड्रोन के उपयोग के लाभ– ड्रोन सटीक सूचनाएँ देने और अपनी कुछ अन्य खूबियों के माध्यम से कृषि क्षेत्र में बड़ी भूमिका निभाने के लिए तैयार है। इसके प्रयोग से कृषकों को निम्नलिखित लाभ हो सकते है।

1– मिट्टी और क्षेत्र विश्लेषण में: कुशल क्षेत्र योजना के लिए कृषि ड्रोन का उपयोग मिट्टी और क्षेत्र विश्लेषण के लिए किया जा सकता है। मिट्टी में नमी की मात्रा, इलाके की स्थिति, मिट्टी की स्थिति, मिट्टी के कटाव, पोषक तत्वों की मात्रा और मिट्टी की उर्वरता का मूल्यांकन करने के लिए ड्रोन का उपयोग सेंसर को माउंट करने के लिए किया जा सकता है।

2– फसल की निगरानी में: फसल निगरानी, बीज बोने से लेकर कटाई के समय तक फसल की प्रगति के पर्यवेक्षण में। इसमें सही समय पर खाद देना, कीटों के हमले की जांच करना और मौसम की स्थिति के प्रभाव की निगरानी करना शामिल है। फसल निगरानी अगले खेती के मौसम को समझने और योजना बनाने में मदद करती है इन्फ्रारेड कैमरों से खेत का निरीक्षण करके ड्रोन प्रभावी फसल निगरानी में मदद कर सकते हैं और अपनी वास्तविक समय की जानकारी के आधार पर किसान खेत में पौधों की स्थिति में सुधार के लिए सक्रिय उपाय कर सकते हैं। ड्रोन फसल के विकास के हर चरण के बारे में सटीक डेटा प्रदान कर सकते हैं और संकट आने से पहले किसी भी बदलाव की रिपोर्ट कर सकते हैं। मल्टीस्पेक्ट्रल छबियां स्वस्थ और अस्वास्थ्यकर फसलों के बीच सूक्ष्म अंतर के बारे में सटीक जानकारी भी प्रदान कर सकती हैं जो नग्न आंखों से छूट सकती हैं। उदाहरण के लिए तनावग्रस्त फसलें स्वस्थ फसलों की तुलना में निकट–अवरक्त प्रकाश को कम दर्शाती हैं। इस अंतर को हमेशा मानव ऑख द्वारा नहीं देखा जा सकता है लेकिन ड्रोन शुरूआती दौर में ही यह जानकारी दे सकते हैं।

3– पशुधन प्रबंधन में : ड्रोन का उपयोग विशाल पशुधन की निगरानी और प्रबंधन के लिए किया जा सकता है क्योंकि उनके सेंसर में उच्च–रिजॉल्यूशन वाले इन्फ्रारेड कैमरे होते है, जो एक बीमार जानवर का पता लगा सकते है और उसके अनुसार तेजी से कार्रवाई कर सकते हैं।

4– रसायनों के छिड़काव व अधिक प्रयोग से बचाने में : ड्रोन के द्वारा पारंपरिक तरीकों की तुलना में बहुत कम समय, श्रम व खर्च में फसलों पर छिड़काव के लिए उर्वरकों और कीटनाशकों का प्रयोग किया जा सकता है। रसायनों व उर्वरकों का ज्यादा इस्तेमाल नुकसानदेह साबित हो सकता है। कीटनाशकों और अन्य रसायनों के अति प्रयोग को कम करने में ड्रोन विशेष रूप से प्रभावी साबित हो सकते हैं। ड्रोन कीटों के हमलों के सूक्ष्म संकेतों का पता लगा सकते हैं और हमले की डिग्री और सीमा के बारे में सटीक डेटा प्रदान कर सकते हैं। इससे किसानों को उपयोग किए जाने वाले रसायनों की आवश्यक मात्रा की गणना करने में मदद मिलती है जो फसलों और मृदा को नुकसान पहुंचाने के बजाय केवल उनकी रक्षा, वृद्धि व स्वास्थ्य में सहायक होगें। इस प्रकार ड्रोन तकनीक, रोग व कीट प्रबन्धन के लिए एक नए युग की शुरूआत कर सकती है।

5– फसल के स्वास्थ्य की जांच करने में : मिट्टी और लगाई गई फसल के स्वास्थ्य की निगरानी के लिए लगातार सर्वेक्षण आवश्यक है। मैन्युअल रूप से, इसमें कई दिन लग सकते हैं और तब भी मानवीय त्रुटि के लिए जगह होती है। ड्रोन उसी काम को कुछ ही घंटों में कर सकता है। इन्फ्रारेड मैपिंग के साथ ड्रोन मिट्टी और फसल दोनों के स्वाथ्य के बारे में जानकारी एकत्र कर सकते हैं।

6– मौसम की गड़बड़ियों के लिए तैयार रहने में: मौसम की स्थिति किसान की सबसे अच्छी दोस्त और सबसे बड़ी दुश्मन साबित होती है। चूंकि इनकी सटीक भविष्यवाणी नहीं की जा सकती है, इसलिये मौसम पैटर्न में किसी भी बदलाव के लिए तैयार करना बेहद मुश्किल हो जाता है। आगामी मौसम की स्थिति का पता लगाने के लिए ड्रोन का उपयोग किया जा सकता है। बेहतर भविष्यवाणियां करने के लिए स्टॉर्म ड्रोन का पहले से ही इस्तेमाल किया जा रहा है। मौसम की जानकारी का उपयोग किसान बेहतर तैयारी के लिए कर सकते हैं। तूफान या बारिश की कमी की अग्रिम सूचना का उपयोग उस फसल की योजना बनाने के लिए किया जा सकता है जो उस मौसम के लिए सबसे उपयुक्त होगी और बुवाई बाद की अवस्था में रोपित फसलों की देखभाल करने में भी मौसम की पूर्व जानकारी लाभदायक होगी।

7– जियोफेसिंग में: ड्रोन पर लगे थर्मल कैमरे जानवरों या इंसानों का आसानी से पता लगा सकते है। इसलिए, ड्रोन खेतों को जानवरों द्वारा होने वाली बाहरी क्षति से बचा सकते हैं, खासकर रात में। इसके अतिरिक्त यह टिड्डियों के हमले से बचाव में विशेष रूप से प्रभावी होगें।

धान की फसल में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के लक्षण एवं उनका निदान

प्रवेश कुमार*, शेषनारायण** एवं ओम प्रकाश***

अब तक पौधों की वृद्धि एवं विकास के लिए 37 आवश्यक पोषक तत्वों को पहचाना गया है। ये हैं कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटेशियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम, सल्फर, लोहा, मैंगनीज, तांबा, बोरान, जस्ता, मोलिब्डेनम, निकेल और क्लोरीन। पौधों के जीवन चक्र को पूरा करने के लिए सभी पोषक तत्व अत्यंत आवश्यक हैं। कार्बन, ऑक्सीजन और हाइड्रोजन पौधों के लगभग 95 से 96 प्रतिशत सूखे पदार्थ बनाते हैं। प्रकाश संश्लेषण में खपत कार्बन डाइऑक्साइड तत्व कार्बन और ऑक्सीजन प्रदान करता है। पानी हाइड्रोजन प्रदान करता है और प्रकाश. संश्लेषण की प्रकाश प्रतिक्रियाओं के दौरान अणु ऑक्सीजन जारी करता है। शेष 14 पोषक तत्व 4 से 5 प्रतिशत पौधे के सूखे पदार्थ का गठन करते हैं।

पोषक तत्वों का वर्गीकरण: पौधे को पोषक तत्वों की आवश्यक मात्रा के आधार पर पोषक तत्वों को प्रमुख एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों में वर्गीकृत किया गया है।

प्रमुख पोषक तत्वः प्रमुख पोषक तत्व वे पोषक तत्व होते हैं जिनकी पौधों को अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है। इसमें कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश, कैल्शियम, मैग्नीशियम और सलल्फर शामिल हैं। प्रबंधन के परिपेक्ष से प्रमुख छः पोषक तत्वों नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश, कैल्शियम, मैग्नीशियम और सलफर को पुनः प्राथमिक एवं द्वितीय पोषक तत्वों में वर्गीकृत किया गया है।

प्राथमिक पोषक तत्व : नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटाश को प्राथमिक पोषक तत्व कहा गया है क्योंकि इनकी पौधों को अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है व्यवसायिक उर्वरकों में मुख्यता यहि पोषक तत्व पाये जाते हैं और इनका प्रयोग करके इन पोषक तत्वों की कमी को दूर किया जाता है।

द्वितीय पोषक तत्व : कैल्शियम, मैग्नीशियम एवं सल्फर को दवतीय पोषक तत्व कहा जाता है क्योंकि पौधों को इनकी मध्यम आवश्यकता होती है और इन पोषक तत्वों की स्थानिक कमी पायी जाती है। और इन पोषक तत्वों का प्रयोग प्राथमिक पोषक तत्वों की पूर्ति के लिए प्रयोग किये गये उर्वरकों से हो जाता है।

सूक्ष्म पोषक तत्वः सूक्ष्म पोषक तत्व पौधों की सामान्य वृद्धि और विकास के लिए कम मात्रा में आवश्यक पोषक तत्व हैं। लोहा, मैंगनीज, जस्ता, तांबा, बोरॉन, मोलिब्डेनम, निकल और क्लोरीन इस श्रेणी में शामिल हैं। लोहा और मैंगनीज को छोड़कर, पौधों में इन पोषक तत्वों की सांद्रता सूखे वजन के आधार पर 100 मिलीग्राम/किग्रा के भीतर पाई जाती है, जो सामान्य रूप से लगभग 500 मिलीग्राम/किग्रा तक जा सकती है। इन तत्वों को लघु या सूक्ष्म तत्वों के रूप में भी जाना जाता है, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि इनका महत्व प्रमुख पोषक तत्वों से कम है। सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी या विषाक्तता, प्रमुख पोषक तत्वों की कमी या विषाक्तता के समान पौधों की पैदावार को प्रभावित करते हैं।

सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के लक्षण एवं उनका प्रबंधन

लोहा

पौधों में लोहे का महत्व :

1. क्लोरोफिल एवं प्रोटीन निर्माण में सहायक है।
2. लोहा साइटोक्रोम्स, फैरीडोक्सीन, व हीमोग्लोबिन का मुख्य अवयव है।
3. यह पौधों की कोशिकाओं में विभिन्न ऑक्सीकरण–अवकरण क्रियाओं में उत्प्रेरक का कार्य करता है। श्वसन क्रिया में ऑक्सीजन का वाहक है।

लोहे की कमी के लक्षण

1. पत्तियों के किनारों व नसों का अधिक समय तक हरा बना रहना तथा शिराओं के मध्य भाग में पीलापन।
2. नई कलियों की मृत्यु हो जाना तथा तनों का छोटा

*विषय वस्तु विशेषज्ञ, मृदा विज्ञान, **कृषि प्रसार एवं ***वरिष्ठ वैज्ञानिक एंव अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केंद्र सोहना, सिद्धार्थनगर
आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्व विद्यालय कुमारगंज अयोध्या– 22429

रह जाना।
3. धान में लोहे की कमी से क्लोरोफिल नहीं बनना तथा पौधे की वृद्धि का रुकना।

लोहे तत्व का प्रबंधन

1. मृदा एवं पौधों में इसकी क्रांतिक मात्रा क्रमशः 4.5 एवं 50 पी पी एम है।
2. लोहे की कमी को दूर करने के लिए प्रयोग किए जाने वाले मुख्य स्रोतों में आयरन सल्फेट, लोहा– इ डी टी ए, पायराइट आदि उपलब्ध हैं।
3. मृदा मैं लोहे की कमी को दूर करने के लिए 50 से 150 किलोग्राम आयरन सल्फेट प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें या 4 से 2 प्रतिशत आयरन सल्फेट का छिड़काव करें।
4. धान की नर्सरी में आयरन की कमी को दूर करने के लिए 4 से 2 प्रतिशत आयरन सल्फेट का 7 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।

जिंक

पौधों में जिंक का महत्वः

1. कैरोटीन व प्रोटीन संश्लेषण मैं सहायक है।
2. हारमौंस के जैविक संश्लेषण में सहायक है।
3. एंजाइम की क्रियाशीलता बढ़ाने में सहायक है क्लोरोफिल निर्माण में उत्प्रेरक का कार्य करता है।
4. पौधों द्वारा फास्फोरस एवं नाइट्रोजन के उपयोग में सहायक होता है।
5. न्यूक्लिक अम्ल और प्रोटीन संश्लेषण में मदद करता है।
6. हारमोंस के जैव संश्लेषण में योगदान करता है।
7. यह सब तो अनेक प्रकार के खनिज एंजाइमों का आवश्यक अंग है।

पौधे में जिंक की कमी के लक्षण :

1. पत्तियों का आकार छोटा, मुड़ी हुई, नसों में नैक्रोसिस, नसों के बीच पीली धारियों का दिखाई पड़ना।
2. धान में जिंक की कमी से खैरा रोग होता हैद्य जिसमें पत्तियों पर लाल भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं।

जिंक का प्रबंधन :

1. मिट्टी में जिंक की कमी को दूर करने के लिए 25 से 30 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई से पूर्व प्रयोग करें।
2. खड़ी फसल में जिंक की कमी के लक्षण दिखाई देने पर 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट व 0.25 प्रतिशत बिना बुझे चूने के घोल का छिड़काव 10 दिन के अंतराल पर 2 से 3 बार करें।
3. जिंक ऑक्साइड के 2 से 4 प्रतिशत खोल में बुवाई. से पूर्व बीज शोधन करने से जिंक की कमी को दूर किया जा सकता है।

बोरॉन तत्व

पौधों में बोरान का महत्व

1. पौधों में शर्करा के संचालन में सहायक एवं परागण और प्रजनन क्रियाओं में भी सहायक होता है।
2. दलहनी फसलों की जड़ ग्रंथियों के विकास में सहायक होता है।
3. यह पौधों में कैल्शियम एवं पोटेशियम के अनुपात को नियंत्रित करता है।
4. प्रोटीन संश्लेषण के लिए आवश्यक है।
5. कोशिका विभाजन को प्रभावित करता है।
6. कैल्शियम के अवशोषण और पौधों द्वारा उसके उपयोग को प्रभावित करता है।

पौधों में बोरान की कमी के लक्षण

1. पौधे की ऊपरी बढ़वार का रुकना तथा तने की गांठों के बीच की लंबाई का कम होना।
2. पौधों में बौनापन होना तथा जड़ों का विकास रुक जाता है।
3. फूलों में बॉपन आ जाता है जिससे फूलों में दाने नहीं बनते।

बोरॉन का प्रबंधन

1. बोरान की कमी को दूर करने के लिए 45 से 20 किलोग्राम बोरेक्स प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई से पूर्व मिट्टी में प्रयोग करें।
2. खड़ी फसल में बोरान तत्व की कमी के लक्षण दिखाई दें तो बोरिक एसिड का 0.2 प्रतिशत घोल का पुष्प आने के समय फसल पर छिड़काव करें।

बैंगन की फसल में लगने वाले प्रमुख कीट एवं उनकी रोकथाम

अमन प्रताप सिंह* एवं विश्व विजय रघुवंशी**

बैंगन के पौधों में कई तरह के कीड़ों का प्रकोप रहता है। इन कीटों से बैंगन की फसल को बहुत नुकसान होता है। पौधों की सही देखभाल कर हम अपने पौधों को इनसे बचा सकते हैं।

बैंगन के पौधों में लगने वाले कीट–

1. तना एवं फल छेदक–यह कीट पत्तों के साथ बैंगन को भी अंदर से खाते हैं। इससे फसल को बहुत नुकसान होता है।
2. लाल मकड़ी–लाल मकड़ी पत्तों के नीचे जाल फैलाती हैं और पत्तों का रस चूसती हैं। इसके कारण पौधे लाल रंग के दिखने लगते हैं।
3. जैसिड–यह कीट पत्तों के नीचे लगकर उसका रस चूसते हैं। इससे पत्तियां पीली और पौधे कमजोर हो जाते हैं।
4. जड़ निमेटोड–इससे पौधों की जड़ों में गांठ बन जाता है। पत्तों का पीला होना और उनका विकास रूक जाना इसक प्रमुख कारण है।
5. एपीलक्ना बीटला–यह पत्तों को खाने वाला लाल रंग का छोटा कीड़ा होता है।
6. सफेद मक्खी–सफेद मक्खियां पत्तियों का रस चूसती हैं।
7. माहू– यह कीट पौधों की कोमल पत्तियों का रस चूस कर फसलों को नश्ट करते हैं।

1. तना एवं फल छेदक–

बैंगन के पौधे के लिए एक गंभीर कीट है। यह फल और तना छेदक केवल सभी प्रकार के अंडे पौधों या बैंगन पर संक्रमित होता है और यह आंतरिक रूप से निविदा तना और फलों को नुकसान पहुंचाता है।

नुकसान की प्रकृति–

पहले लक्षण लार्वा के शुरूआती भक्षण से टहनियों के सिरों का मुरझाना है। बाद में, फूल, कलियां और तने भी प्रभावित हो जाते हैं। तरूण लार्वा नई पत्तियों की मध्यशिरा और मुलायम टहनियों के अंतिम हिस्से में छेद करके तने में घुस जाते हैं और संवहनी ऊतकों को मार देते हैं (डेडहार्ट)। वयस्क लार्वा फलों में छेद करते है और छोटे–छोटे अंदर घुसने के छेदों पर सूखा मल छोड़ते हैं। फल अंदर से खोखला, बदरंग और कीट मल से भरा होता है। गंभीर प्रकोप होने पर पौधा मुरझा कर कमजोर पड़ सकता है, जिससे उपज को नुकसान होता है। ऐसे पौधों में लगे फल, खाने के लिए अनुपयुक्त हो सकते हैं। क्षति तब ज्यादा होती है जब कई पीढ़ियों के बाद कीटों की अच्छी–खासी आबादी हो जाती है।

जीवन चक–

अति का कारण पतंगा ल्यूसिनोडस ऑर्बोनेलिस के लार्वा है। बसंत में, मादाऐं दूधिया रंग के अंडे एकल रूप से या समूहों में फली की निचली तरफ, तनों फूलों की कलियों या फल के आधार पर देती है। 3–5 दिन बाद अंडों से लार्वा बाहर निकल आते हैं और आमतौर पर सीधे फल में छेद करते हैं। पूरी तरह विकसित लार्वा सुदृढ़ तथा गुलाबी रंग और भूरे सिर वाला होता है। भक्षण पूरा होने पर तनों, सूखी टहनियों या जमीन पर गिरी पत्तियों पर बुने गये धूसर, मजबूत ककून में प्यूपा बनता है।। प्यूपा अवस्था 6–8 दिन की होती है, जिसके बाद वयस्क प्रकट होते हैं। वयस्क पतंगा 2–5 दिन जीवित रहता है और मौसम पर निर्भर करते हुए अपना 21–43 दिन का जीवन चक्र पूरा करता है। वर्श के सक्रिय समय में इनकी पांच पीढ़ियां तक हो सकती है। सर्दियों में लार्वा मिट्टी में शीत–शयन करता है। यह कीट सोलेनेसी परिवार के कई अन्य पौधों जैसे टमाटर और आलू को भी खाता है।

रोकथाम–

जैविक नियंत्रण–

कई परजीवी एल0 ऑर्बोनेलिस के लार्वा को खाते हैं, जैसे कि प्रिस्टोमेरस टेस्टैसियस, क्रिमेस्टस

*शोध छात्र, कीट विज्ञान, **शोध छात्र, पादप रोग विज्ञान, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

फ्लैवोऑर्बिटैलिस और शिरैकिया स्कोएनोविक। खूडोपेरीकीटा, ब्रैकोनिडस और फैनरोटोमा की प्रजातियों को भी बढ़ावा दिया जा सकता है या खेत में छोड़ा जा सकता है। कीट लगे फलों पर नीम के बीजों (निबौरी) के रस का 5 प्रतिशत की दर से या स्पाइनोसैड का भी इस्तेमाल किया जा सकता है। कीट को अंडे देने से रोकने के लिए ऊपरी 10 सेमी. किनारों पर चिपचिपे पदार्थ जैसे कि गोंद लगे नेट का इस्तेमाल किया जा सकता है। अगर गोंद उपलब्ध न हो तो नेट की 2 मी0 की ऊँचाई पर 40 सेमी फैलाऐं और फिर बाहर निकाल कर सीधे लगे नेट से नीचे कर 80–85^{0} कोण पर फैलाते जाएं।

रासायनिक नियंत्रण–

हमेशा एक समन्वित दृष्टिकोण से रोकथाम उपायों के साथ उपलब्ध जैविक उपचारों का इस्तेमाल करें। संक्रमण की अवस्था और सीजन पर निर्भर करते हुए उपचार अलग–2 होगा।

सोविमॉल (0.1%), एंड्रिन (0.04%), मैलाथियान (0.1%), का नियमित अंतराल पर छिड़काव इस कीट का प्रकोप काबू में रखता है। फल पकने और तोड़ने के समय सिंथेटिक पायरेथ्रॉयड और कीटनाशकों का इस्तेमाल न करें।

निवारक उपाय–

1. अगर आपके खेत में उपलब्ध हो तो प्रतिरोधी या सहनशील किस्में लगाएं।
2. संवेदनशल मेजबान के साथ अन्य फसलें जैसे सौंफ, अजवाइन, धनिया और निजेला लगाएं, अगर संभव हो तो दो सीजन के लिए।
3. रोगाणु के लक्षणों के लिए खेत की लगातार निगरानी करें।
4. प्रभावित पत्तियां, टहनियां या फलों को तोड़कर खेत से कुछ दूर नश्ट कर देना चाहिए।
5. जमीन पर से गिरे हुए फल, पत्तियां और टहनियां हटा दें।
6. गंभीर प्रकोप होने पर पूरे पौधे को उखाड़ कर नष्ट कर दें।
7. नॉयलॉन नेट का इस्तेमाल करके पतंगे का अन्य फसलों या खेतों में जाना रोकें।
8. पतंगों को आकर्षित करने और बड़ी संस्था में पकड़ने के लिए फेरोमॉन जाल का इस्तेमाल करें।

2. माहू–

यह कीट पौधों की कोमल पत्तियों का रस चूस कर फसल को नष्ट करते हैं।

नियंत्रण–

माहू कीट पर नियंत्रण के लिए 15 लीटर पानी में 10 ग्राम अरेवा 25 प्रतिशत मिलाकर छिड़काव करें।

3. लाल मकड़ी–

यह पत्तों के नीचे जाल फैलाती है और पत्तों का रस चूसती है। जिससे पत्ते लाल रंग के दिखने लगते हैं। **नियंत्रण**–

इस कीट पर नियंत्रण के लिए प्रति लीटर पानी में 2 मिलीलीटर नीम युक्त कीटनाशक जैसे निम्बोझिड़िन या नीमोल नीमगोल्ड मिलाकर छिड़काव करें।

4. जैसिड–

यह कीट पत्तों के नीचे लगकर उसका रस चूसते हैं। इससे पत्तियां पीली और पौधे कमजोर हो जाते हैं।

नियंत्रण–

इस कीट पर नियंत्रण के लिए 15 लीटर पानी में 7 ग्राम टाटामिड़ा मिलाकर छिड़काव करें।

5. सफेद मक्खी–

सफेद मक्खियां पत्तियों का रस चूसती हैं। जिससे पत्तियां सिकुड़ जाती हैं। इसके अलावा यह वायरस रोगों को एक पौधे से दूसरे पौधों में फैलाने का काम भी करती हैं।

नियंत्रण–

सफेद मक्खियों पर नियंत्रण के लिए 150 लीटर पानी में 50 मिलीलीटर देहाव हॉक मिलाकर छिड़काव करें।

श्री अन्न (सुपर फूड/मिलेटस) द्वारा महिला स्वंय सहायता समूह में उद्यमिता विकास

रेनू सिंह* एवं आर के0 आनन्द**

भारत अनाज उत्पादन मे पूरे विश्व मे अग्रणी कतार मे है भारत मे सन् 2018 को मिलेट वर्ष के रूप मे मनाया जा चुका है। संयुक्त राष्ट्र संध द्वारा वर्ष 2023 को अंतराष्ट्रीय मिलेट वर्ष के रूप मे विश्व मे मनाया जा रहा है श्री अन्न को मोटा अनाज अथवा सुपर फूड के तौर पर जाना जाता है। उदाहरण के तौर पर ज्वार, बाजरा, रागी,(मंडुआ) कोद्रो कुटकी, जौ, कांगनी, सावा और चेना इत्यादि। इन मे प्रचूर मात्रा मे प्रोटीन, कार्बोहाइडेट, विटामिन, खनिज लवण, फाइबर इत्यादि पोषक तत्व पाए जाते है। बीटा–कौरोटीन, नाइसिन, विटमिन ठ$_6$ पौटेशियम, मैग्नीशियम, जिंक, मैग्नीज, जस्ता, फोलिकअम्ल आदि खनिज लवणों की प्रचूर मात्रा पाए जाने की वजह से इन से निर्मित खाद्य पदार्थो (पोषक युक्त आहार) की पूरी दुनिया में मांग है। श्री अन्न (मिलेटस) को कम पानी और कम उपजाऊ भूमि में भी उगाये जा सकते है यह कम अवधि की फसल होने की वजह से इन पर लागत भी कम आती है। व खेत भी अगली फसल के लिये खाली हो जाता है श्री अन्न (मोटे अनाज) की खेती मे रसायनों की जरूरत नहीं पड़ती है। श्री अन्न (मोटे अनाज) की खेती पर्यावरण, मनुष्य व पशुओ के स्वास्थ्य के लिए बेहतर होने की वजह से सरकार किसानों को मोटे अनाज की खेती करने पर प्रोत्साहित कर रही है। व किसानों का भी रूझान इस की तरफ काफी बढ़ा है। इस के सेवन से मधुमेह हृदय रोग, उच्च रक्त–चाप, कब्ज आदि बीमारियो से बचा जा सकता है। मोटे अनाज मे ग्लूटेन की मात्रा नगन्य होने की वजह से यह मोटपा कम करने मे सहायक है इसलिए इसकी मांग कई यूरोपियो देशो मे बहुत ज्यादा है इसलिए इनके उत्पादन व निर्यात से काफी आय अर्जित की जा सकती है। महिलाएं स्वयं सहायता समूह के माध्यम से मोटे अनाजो के प्रसंस्करण व मूल्य संवर्धन द्धारा स्वरोजगार स्थपित कर अपनी आय को दुगुना कर सकती है। श्री अन्न (मोटे अनाज) आधरित खाध पदार्थ जैसे पौष्टिक, लड्डू, अप्पे, ढ़ोकला, बेबीफूड, बिस्कुट, मल्टीग्रेन रोटी, उत्तपम, भंरवा रोटी, दलिया, खिचडी, हलवा, ब्रेड, डोसा, पूरी, रागी कटलेट, रागी खीर, रागी खजूर लड्डू, रागी नरियल बर्फी, रागी नमकपारा, मठरी, बाजरा, लड्ड, नमक पारा, नमकीन, पोहा, सावाखीर, कोदों खिचड़ी, इडली, पेय पदार्थ इत्यादि अनेक अनगिनत मूल्य सवंर्धित खाध पदार्थ तैयार कर बिक्री द्वारा अर्थिक रुप से सशक्त हो सकती है।

1 रागी पर अधरित मूल्य सवंर्धित खाद्य पदार्थ

रागी गोद के लड्डू

सामग्री –

रागी का आटा	250 ग्रा0
गोंद	50 ग्रा0
सोंठ पाऊडर (पीसी हुई)	50 ग्रा0
बादाम	20 ग्रा0
इलायची	7–8
गुड़	100 ग्रा0
नारियल/सुखे मेवे	200 ग्रा0/स्वादनुसार
किशमिश	50 ग्रा0
पानी	1/4 कप
हल्दी	20ग्रा0
देशी घी	50 ग्रा0

विधि –

गोदं को 10 मिनट तक थोडे से गर्म धी मे भून लें फिर ठण्डा होने दे व मिक्सी मे पीस लें।

एक मोटी पेंदी वाले पैन/कड़ाही में रागी का आटा मध्यम ऑच पर सुनहरा होने तक भून लें। सुनहरा होने पर थोडा सा धी डाल कर भून लें।

अब उसी पैन मे पानी मे गुड डाल कर मिक्स कर एक

(शेष पृष्ठ 26 पर)

*एसोसिऐट प्रोफेसर/विषय वस्तु विशेषज्ञ, गृहविज्ञान के0वी0के0 कठौरा अमेठी, **वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष के0वी0के0 कठौरा अमेठी आ0न0दे0 कृ एवं प्रौ0 विश्वविद्यालय कुमारगंज अयोध्या (उ0प्र0)

दुधारू पशुओं का प्रबंधन

डी०डी० सिंह*, बी० पी० शाही** एवं आर० आर० सिंह***

दुधारू पशुओं के उचित प्रबंधन में उनके ब्याने के पूर्व की अवधि जिसमें वे गर्भित होते है, परन्तु दूध में नही होते है, जिसे हम शुष्क अवधि (Dry period) भी कहते है, के दौरान उनकी उचित देखभाल का विशेष महत्व होता है। सामान्यतया उच्च उत्पादन क्षमता वाले पशुओं का शुष्क अवधि के दौरान प्रबंधन, उनके दुग्ध उत्पादकता की अवधि के दौरान प्रबंधन से ज्यादा महत्वपूर्ण है।

सामान्य तौर पर किसी भी दूध देने वाली गाय या भैंस जो कि गर्भित हो और दूध मे हो, को उसके ब्याने की अपेक्षित तारीख के 60 दिन पूर्व शुष्क कर देना चाहिये, जिससे कि इन 60 दिनों के दौरान पशुओं को दिया जाने वाला आहार दूध के निर्माण में प्रयुक्त होने के बजाय गर्भ के तीव्र विकास एवं गर्भित पशु में दुग्ध अवधि के दौरान उसके शरीर में होने वाली भौतिक, रासायनिक एवं जैविक क्षरण को यथाशीघ्र पूर्ण करने में पूरी तरह प्रयुक्त हो सके।

दुधारू पशुओं को शुष्क करने हेतु निम्नलिखित 3 विधियॉ अपनायी जा सकती है।

1. **दुहान को अचानक पूरी तरह बंद कर देना**:– यह विधि निम्न उत्पादकता वाले पशुओं (3–5 ली0/प्रतिदिन) में अपनायी जाती है। इसमें पशु का दुहान अचानक किसी दिन पूरी तरह से बंद कर देते है। उसके बाद पशु के दुबारा ब्याने पर ही पशु से दूध निकालते है।

2. **अनियमित अंतराल पर दुहान करना**:– यह विधि मध्यम उत्पादकता वाले पशुओं (6–10 ली0/प्रतिदिन) के लिये अपनायी जाती है। इसमें पशुओं का दुहान अनियमित अंतराल पर करते है। साथ ही क्रमागत रूप से दुहान का अंतराल बढाते जाते है और इस तरह पशु कुछ दिनों में शुष्क हो जाता है।

3. **अपूर्ण मात्रा में दुहान करना**:– यह विधि उच्च उत्पादकता वाले पशुओं (10–15 ली0/प्रतिदिन) में अपनायी जाती है। इसमें पशुओं का पूरा दोहन नही किया जाता है। इस तरह से हर दुहान में पशु से दोहित दूध की मात्रा घटाते जाते है और कुछ दिनों में पशु शुष्क हो जाता है। ऐसा करने से पशुओं में थनैला रोग की सम्भावना कम हो जाती है।

ड्राई थिरेपीरू. पशु जो दुग्धावधि में थनैला रोग से संक्रमित/प्रभावित थे, का शुष्क अवधि के दौरान उचित उपचार करना चाहिये। ऐसा करने से अगली ब्यांत में पशु के थनैला रोग से प्रभावित होने की सम्भावना तो घटती ही है साथ ही पशु से दोहित दूध की मात्रा एवं गुणवत्ता भी प्रभावित नही होती है।

शुष्क गर्भित पशुओं को उनकी शुष्कावधि के दौरान दूसरे पशुओं से अलग एवं छोटे समूहों में रखना चाहिये जिससे उनके रख–रखाव पर अधिक एवं विशिष्ट ध्यान दिया जा सके साथ ही उनमें आपस में टकराव की सम्भावना को कम किया जा सके। ऐसा करने से पशुओं में गर्भ को गिरने की सम्भावना को काफी कम किया जा सकता है।

आहार:– शुष्क अवधि के दौरान पशुओं का उचित आहार प्रबंध बहुत ही महत्वपूर्ण है। ऐसा करने से पशुओं की शारीरिक पुष्टता बरकरार रखी जा सकती है। पशुओं की वृद्विदर उचित स्तर पर रखी जा सकती है। भ्रूण का उचित एवं तीव्र विकास किया जा सकता है। कीले या खीस की गुणवत्ता एवं मात्रा सुधारी जा सकती है। साथ ही ब्याने के बाद पशु की दुग्ध उत्पादकता एवं गुणवत्ता बढायी जा सकती है।

ऐसा करना इसलिये भी आवश्यक है क्योंकि एक तुरन्त का ब्याहा हुआ पशु अधिक मात्रा में आहार ले पाने में असमर्थ होता है, जबकि उसे ब्यांत के प्रारम्भिक दिनों में अधिक पुष्टाहार की आवश्यकता होती है।

स्टीमिंग अप:– गायों के दूध में आने के 7.5 महीने बाद से लेकर 10 महीने बाद तक की अवधि में उन्हें 1–2 किलो राशन/दाना प्रतिदिन प्रदान करना चाहिये, जिससे कि इन दिनों में प्रत्येक गाय के शरीर का वजन 20–25 किलो प्रतिदिन के हिसाब से बढ सके। इसके साथ ही प्रत्येक गाय को उसकी इच्छा के अनुसार हरा चारा प्रदान करना चाहिये।

संक्रमण काल:– यह पशुओं के ब्याने के लगभग 3 सप्ताह पहले से 3 सप्ताह बाद की अवधि होती है। इस अवधि में उच्च उत्पादकता वाले पशुओं को प्रदान किये जाने वाले राशन/दाने की मात्रा नियमित रूप से बढाते हुये उन्हे अधिकतम दूध उत्पादन की चुनौती दी

*एसोसिएट प्रोफेसर (पशु रोग विज्ञान); **वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अद्यक्ष, के०वी०के० मसौधा, अयोध्या,
***अपर निदेशक प्रसार, प्रसार निर्देशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उत्तर प्रदेश

जाती है।

चैलेंन्ज फीडिंग:– चैलेन्ज फीडिंग में शुष्कावधि वाली गर्भित गायों को उनके ब्याने के सम्भावित दिन से 2 सप्ताह पहले से 1/2 किलो राशन प्रतिदिन के हिसाब से खिलाना प्रारम्भ करते हुये, इसकी मात्रा 300–400 ग्राम प्रतिदिन बढाते जाते है, जब तक कि गाय अपने शरीर के वजन में प्रत्येक 100 ग्राम की वृद्वि के लिये 1/2 से 1 किलो राशन का उपभोग करना शुरू न कर दे।

शुष्कावधि में गायों को पर्याप्त मात्रा में हरा चारा, उसमें भी लेम्यूमिनस हरा चारा उपलब्ध कराना चाहिये। जिससे पशुओं को विटामिन 'ए', कैल्शियम तथा नमक आदि पोषक तत्व उचित मात्रा में मिल जाते है। लेम्यूमिनस चारे के साथ आवश्यक रूप से पौटेशियम युक्त आहार जैसे गेंहू की चूनी (Wheat bran) प्रदान करना चाहिये।

दुग्धावधि के दौरान प्रबंधन:–

संक्रमण अवधि के दौरान पशुओं के आहार के प्रकार में क्रमिक परिवर्तन करना चाहिये। तीव्र परिवर्तन से विभिन्न प्रकार की उपापचयी बीमारियों की सम्भावनायें बढ जाती है।

ब्यानें की सम्भावित तारीख से एक सप्ताह पहले पशुओं को अन्य पशुओं से अलग रखकर उस पर विशिष्ट ध्यान देना चाहिये।

दुधारू पशुओं में स्तन्य ज्वर ;डपसा थ्मअमतद्ध की सम्भावना अधिक होती है। उच्च उत्पादकता वाले पशुओं के राशन में विशेष रूप से कैल्शियम एवं पौटेशियम की मात्रा बढाकर उन्हें स्तन ज्वर से बचाया जा सकता है।

दुधारू पशुओं का उनके ब्याने के समय उचित देखभाल अति आवश्यक है, जिससे जरूरत पडने पर बच्चा निकालने में पशु की मदद की जा सके। साथ ही पशु समय से (6–7 घंटे में) जेर निकाल दे, परन्तु इसे खाये नही अन्यथा पशु की उत्पादकता धट जाती है और चारा खाने में रूचि घट जाती है।

पशु को ब्याने के तुरन्त बाद गुनगुना पानी और गुड खिलाना चाहिये जिससे दूध की मात्रा एवं गुणवत्ता में सुधार आता है।

पशुओं को अत्यधिक सर्दी एवं गर्मी से बचाने के उचित उपाय करने चाहिये।

उच्च उत्पादकता वाले पशुओं को एक दिन में नियमित अंतराल पर (गायों को 3 बार एवं भैसों को 2 बार) दुहना चाहिये।

उच्च उत्पादकता वाले पशुओं का दुहान मशीन द्वारा करना चाहिये या फिर मुट्ठी बंद कर हाथ से दुहना चाहिये।

आहार प्रबंधन:– 4–5 किलो दूध देने वाले दुधारू वयस्क पशु को सामान्य रूप से 25–30 किलो हरा चारा, 5–6 किलो सूखा चारा (भूसा) प्रदान करने से उनकी समस्त आवश्यकताओं की आपूर्ति की जा सकती है। परन्तु अधिक दूध देने वाले पशुओं को प्रति 2 किलो अधिक दुग्ध उत्पादन के लिये 1 किलो अतिरिक्त दाना/राशन देना चाहिये। इस तरह से एक 10 किलो दूध देने वाली गाय को 25–30 किलो हरा चारा, 5–6 किलो सूखा चारा एवं 2.5 से 3.0 किलो दाना/राशन प्रदान करना चाहिये।

दुधारू पशुओं को आहार, शारीरिक पुष्टता, दुग्ध उत्पादन एवं भ्रूण के विकास हेतु चाहिये होता है।

विभिन्न शोधों के द्वारा ऐसा देखा गया है कि 10 किलो तक दूध देने वाली गायों एवं 7 किलो तक दूध देने वाली भैसों के लिये पर्याप्त मात्रा में अच्छी गुणवत्ता वाले दलहनी फसलों का हरा चारा उनकी समस्त आवश्यकताओं की आपूर्ति करने में सक्षम होता है। साथ ही उन्हें अतिरिक्त राशन या दाने की आवश्यकता नही होती है। परन्तु यदि गाय की उत्पादकता 10 किलो प्रतिदिन एवं भैंस की उत्पादकता 7 किलो प्रतिदिन से अधिक है तो गायों को प्रति 2.5 किलो एवं भैसों में प्रति 2 किलो अतिरिक्त दूध उत्पादन हेतु 1 किलो अतिरिक्त दाना/ राशन प्रदान करना चाहिये। उपरोक्त के साथ–साथ दुधारू पशुओं के प्रबंधन में निम्नलिखित बातों का ध्यान आवश्यक रूप से रखना चाहिये–

पशुओं में साफ–सफाई का उचित ध्यान रखना चाहिये।

पशुओं को कीड़ों वाली दवा एवं विभिन्न बीमारियों के लिये टीकाकरण उचित समय पर करना चाहिये।

पशुओं को ब्याने के 40–60 दिन बाद पुनः गर्भित कर देना चाहिये।

पशुओं में दुग्धावधि को 300–305 दिन तक ही सीमित करना चाहिये।

गर्भित दुधारू पशुओं को उनके ब्याने की अपेक्षित तारीख से 60 दिन पहले शुष्क कर देना चाहिये।

दुधारू पशुओं में दो क्रमागत ब्यांत के बीच का समय 12 माह तक सीमित रखना चाहिये।

गर्मियों के दिनों में ज्यादातर हरा चारा उपलब्ध करवाना चाहिये एवं पशुओं को सुबह में जल्दी या शाम में देर से चरने के लिये छोड़ना चाहिये।

अगस्त माह में किसान भाई क्या करें

फसलों में

डॉ. आर.आर. सिंह, प्राध्यापक (मृदा विज्ञान)

(1) सीधे बोये धान में यदि पहली निराई न की गयी हो तो निराई अवश्य करें। इसके बाद जो फसल एक माह की हो गयी हो, उसमें 30 किग्रा नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से टापड्रेसिंग करें।

(2) मक्का की संकर एवं संकुल प्रजातियों के लिए क्रमशः 30 एवं 20 किग्रा नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से टापड्रेसिंग नर मंजरी निकलते समय करें।

(3) दाना पड़ने की अवस्था पर यदि वर्षा न हो तो सिंचाई अवश्य करें।

(4) उर्द, मूँग तथा अरहर में यदि पहली निराई न की गयी हो तो शीघ्र ही खरपतवारों को निकाल दें।

(5) उर्द, मूँग तथा अरहर के पौधे घने हों तो निराई करते समय बिरलीकरण कर दें। कतार से बोयी गयी फसल में अरहर की पौधों से पौधों की दूरी 20–24 सेमी रखें।

सब्जी एवं उद्यान में

डॉ. अश्वनी कुमार सिंह
विषय वस्तु विशेषज्ञ, (उद्यान)

(1) जाड़े एवं बसन्त वाली टमाटर तथा बैंगन की पौध इस माह के प्रथम एवं दूसरे पखवारे में डालें।

(2) मुख्य समय में तैयार होने वाली गोभी की पौध माह के प्रथम सप्ताह में डालें तथा पिछैती एवं मध्यम किस्मों की पौध माह के दूसरे पखवारे में डालें।

(3) अगेती पात गोभी की पौध इस माह के दूसरे पखवारे में डालें।

(4) अगहनी गोभी, खरीफ प्याज, जाड़े की टमाटर और बैंगन की पौध की रोपाई करें।

(5) यदि सूखा की स्थिति हो तो गाजर, सेम, लोबिया, भिण्डी (बीज वाली फसल), मूली, बारहमासी करेला, लौकी नेनुआ की बुवाई कर सकते हैं।

(6) नये बाग लगाने का यह सर्वोत्तम माह है। पहले से तैयार गड्ढो में पौधों की रोपाई करें। यदि पहले से गड्ढे नहीं तैयार किये गये हैं तो आम, आँवला, बेर के लिये 75 सेमी व्यास तथा इतने ही गहराई के गड्ढे खोदकर खाद एवं मिट्टी की समान मात्रा भरकर पौधे रोपित कर सकते हैं।

(7) नये बागों की निराई–गुड़ाई द्वारा खरपतवार निकालकर थाले साफ रखें। पौधों के मूल वृन्त में यदि फुटाव आ रहा हो तो उसे निकाल दें। आवश्यकता पड़ने पर रोपित पौधों को सहारा दें। बागो में जल निकास का उचित प्रबन्ध करें। गोबर की सड़ी खाद अथवा कम्पोस्ट खाद का उपयोग करें। बाग में यदि हरी खाद के लिए सनई, ढैंचा अथवा मूँग की बुवाई की गयी तो पलटाई करके पानी भर दें।

(8) पुराने बागों की एक अच्छी जुताई कर दें, जिससे गिरी हुई पत्तियाँ एवं अन्य कूड़ा करकट सड़ सकें और खर–पतवार नष्ट हो सके।

पौध संरक्षण

डॉ. वी. पी. चौधरी एवं डॉ. पंकज कुमार
सहायक प्राध्यापक (पादप रोग)

(1) धान में खैरा रोग के नियंत्रण के लिए 5 किग्रा जिंक सल्फेट तथा 20 किग्रा यूरिया अथवा 2.5 किग्रा बुझे हुए चूने को 800–1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

(2) धान की फसल में कीटों के नियंत्रण के लिए फास्फेमेडान 250–300 मिली प्रति हेक्टेयर 800 से 1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

(3) मक्का में तुलसिता रोग के नियंत्रण के लिए जिंक कार्बोमेट रसायन 2 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से 800–1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

संकलनकर्ता : डॉ. अनिल कुमार विषय वस्तु विशेषज्ञ, प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

(4) धान में झोंका रोग नियंत्रण के लिए जिंक अथवा एग्रीमाइसीन 75–100 ग्राम को 800–1000 लीटर पानी मे घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें।

पशुपालन
डॉ. सुरेन्द्र सिंह
विषय विस्तु विशेषज्ञ (पशु विज्ञान)

(1) पशुओं के अच्छे स्वास्थ्य के लिए जो किसान भाई हरे चारे की बुवाई अभी तक न कर पाये हों वे इस माह के प्रथम सप्ताह तक मीठी हरी, मक्का, ज्वार, बाजरा, एमपी चरी तथा लोबिया की बुवाई अवश्य कर दें।

(2) भैंसों में ब्यांत का समय चल रहा है अतः नवजात पड़वा/पड़िया को भैंस का प्रथम दूध खींस तीन दिन तक अवश्य पिलाएं। इसमें बच्चों में विभिन्न प्रकार की बीमारियों से बचाव की सम्भावना बढ़ जाती है।

(3) पशुओं को जहरी बुखार, लंगड़िया तथा गलाघोंटू बीमारी का टीका यदि अभी तक न लगा हो तो इस माह में अवश्य लगवा दें।

(4) जो भेड़, बकरी, गरमी में आई हो उन्हें प्राकृतिक या कृत्रिम रूप से गर्भित करा दिया जाए।

(5) बरसात में बकरियों को कुमड़ी रोग से बचाव हेतु प्रति बकरी प्रतिदिन दो टिकिया हेट्राजॉन अथवा केरीसाइड दवा 15 दिन तक दिया जाए।

(6) मुर्गियों से अधिक अण्डा व मांस उत्पादन के लिए उन्हें बहुत दिनों का पुराना दाना नहीं देना चाहिए, क्योंकि बरसात के मौसम में दानें में फफूँदी लगने की सम्भावना अधिक रहती है।

(7) मुर्गियों की खूनी पेचिश से बचाव हेतु उनके दाने में एन्टीकॉक्सीडियोस्टेट दवा मिलाकर दिया जाए।

(8) बरसात के मौसम में मुर्गियों का बिछावन गीला हो जाता है जिससे तरह–तरह की समस्या उत्पन्न होती है अतः गीले बिछावन को साफ करके नया बिछावन डालें अथवा चूना मिलाकर गुड़ाई कर दें।

(पृष्ठ 22 का शेष)

तार की चाश्नी बनाये अब इसमे रागी का आटा, पीसी गोंद, इलाइची, सोठ, हल्दी, बादाम पाउडर, नारियल बुरादा (75ग्रा0) किशमिश पीसी हुई अच्छी तरह मिला दे।

मिश्रण को थोडा समय ठंडा होने के लिए रख दे। हाथ मे हल्का सा देशी धी लगाकर लड्डू बना लें और ऊपर से थोडा नारियल बुरादा/पाउडर लगा लें। स्वादिष्ट पौष्टिक लड्डू तैयार है।

2 रागी में पोषक तत्व की मात्रा (प्रति 100 ग्राम में):

पोषक तत्व	**(प्रति 100ग्रा0 मे)**
प्रोटीन	7.3ग्रा0
वसा	9.3ग्रा0
कार्बोहाइडट	7.2ग्रा0
कैल्शियम	3.4ग्रा0
रेशा	3.6ग्रा0
ऊर्जा	328कि0कैलोरी
नाइसिन बी	1.1मि0ग्रा0
राइबोफलेविन बी	0.19मि0ग्रा0
थायमिन बी1	042मि0ग्रा0
कैरोंटीन	42माइक्रोग्रा0
लोहा	5.4मि0ग्रा0
कैल्शियम	0.33मि0ग्रा0
फास्फोरस	0.24मि0ग्रा0

स्त्रोतः– आई सी. एम. आर.

स्वंय सहायता समूह के माध्यम से महिलाएं श्री अन्न (मोटे अनाज)/ सुपर फूड मे संवर्धन तथा प्रसंस्करण द्वारा एक लाभप्रद व्यवसाय स्थापित कर सकती है। महिलाएं स्वास्थवर्धक खाध उत्पाद तैयार कर बाजार मांग की पूर्ति के साथ अपने परिवार व समाज का स्वास्थ्य व पर्यावरण सुधार सकती है। यह उन के उद्यमिता विकास मे मील का पत्थर संबित होगा क्योकि मोटे अनाज (सुपर फूड) का मूल्यसंवर्धन व प्रसंस्करण मे अपार संम्भावनाएं है।

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के

प्रश्न : धान में खरपतवार नियंत्रण हेतु कौन सी दवा का प्रयोग करें?

(श्री सुरेन्द्र सिंह, ग्राम माझगांव, जनपद अयोध्या)

उत्तर : धान में खरपतवार नष्ट करने के लिए खुरपी या पैडीवीडर का प्रयोग करें। यह कार्य खर पतवारनाशी रसायनों द्वारा भी किया जा सकता है। चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण हेतु 2–4 डी सोडियम साल्ट का 400 ग्राम से 500 ग्राम सक्रिय रसायन प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग किया जा सकता है। इसका प्रयोग धान की रोपाई के एक सप्ताह बाद और सीधी बुवाई के 20 दिन बाद करना चाहिए। रोपाई वाले धान में घास जाति एवं चौड़ी पत्ती वाले खर पतवार के नियंत्रण हेतु ब्यूटाक्लोर 50 ईसी 3.3 लीटर प्रति हेक्टेयर का रोपाई के 3–4 दिन के अन्दर प्रयोग करना चाहिए। ब्यूटाक्लोर गीली भूमि में एवं बेन्थियोकार्ब का प्रयोग उपरिहार में करना अधिक उचित होगा।

प्रश्न : दुधारू पशुओं को रातब/संतुलित आहार किस अनुपात में दिया जाय?

(श्री पराग यादव, ग्राम खण्डासा, जनपद अयोध्या)

उत्तर : दुधारू पशुओं को दाना उनके दुग्ध उत्पादन की मात्रा के ऊपर निर्भर करता है। दुधारू भैंस को 2.5 किग्रा दूध उत्पादन पर 1 किग्रा दाना तथा गाय को 3.0 किग्रा दूध उत्पादन पर 1.0 किग्रा दाना देना चाहिए।

प्रश्न : धान की फसल में धान की पत्ती भूरी होकर जल जाया करती है, उपाय बतावें?

(श्री बरसाती प्रजापति, ग्राम नवाबगंज, जनपद सुल्तानपुर)

उत्तर : आपके खेत में खैरा रोग लगा है। यह रोग जस्ते की कमी से होता है। इसके नियंत्रण के लिए 5 किग्रा जिंक सल्फेट तथा 16 से 20 किग्रा यूरिया 800–1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें।

प्रश्न : अमरूद की खेती कैसे करें?

(श्री जगजीवन, ग्राम मुसाफिर खाना, जनपद अमेठी)

उत्तर : इलाहाबाद सफेदा, लखनऊ–49 चित्तीदार, लालगूदे वाला, बेदाना अमरूद की प्रमुख किस्मे हैं। इसके पौधे लगाने का उपयुक्त समय जुलाई–अगस्त का महीना है। पौध लगाने के लिए 75 सेमी लम्बे और 75 सेमी चौड़े तथा एक मीटर गहरे गड्ढे खोदकर 15–20 दिन तक खाली छोड़ देना चाहिए। इसके बाद उनमें सड़ी गोबर की खाद और मिट्टी बराबर मात्रा में मिलाकर गड्ढे में भरकर सिंचाई कर देना चाहिए। इस प्रकार तैयार किये गये गड्ढे में पौध लगाना चाहिए।

प्रश्न : हमारे खेत में मोथा अधिक उगता है इसको खत्म करने का उपाय बतायें?

(श्री रवीन्द्र पाठक, ग्राम तारून, जनपद अयोध्या)

उत्तर : खेत खाली रहने पर ग्रीष्मकालीन 2–3 जुताई करें। खरीफ में शीघ्र बढ़ने वाली फसल जैसे सनई या ढैंचा हरी खाद के लिए अथवा ज्वार या बाजरा लोबिया के साथ चारे के लिए उगायें। खेत में अच्छी प्रकार लेव लगाकर धान की रोपाई करें। धान, बाजरा, मक्का व ज्वार में संस्तुति के अनुसार 2, 4 डी एस्टर शाकनाशी रसायन का प्रयोग करें।

किसी भी फसल में शुरू की निराई 15–20 दिन के अन्तराल पर करें और निराई करते समय मोथा के पौधों को समूल गाँठ सहित निकाल कर नष्ट करें। कुछ अन्य शाकनाशी रसायनों का प्रयोग भी विभिन्न फसलों में किया जा सकता है, जिससे अन्य घासों के साथ–साथ मोथा भी नष्ट हो जायेगा।

प्रश्न : मुर्गियों से अधिक अण्डा उत्पादन प्राप्त कैसे करें?

(श्री अनुज, ग्राम रूदौली, जनपद अयोध्या)

उत्तर : मुर्गियों से अधिक अण्डा उत्पादन प्राप्त करने हेतु उन्नत नस्ल की सफेद लेग हार्न मुर्गियों को पालकर उन्हें संतुलित मुर्गी आहार दें जिससे पूरे साल में 300 से 330 अण्डे प्राप्त किया जा सकता है।

पंजीयन संख्या - 54461/91

डाक पंजीयन संख्या एल. डब्लू./एन.पी. 34

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

द्वारा

कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र

के अन्तर्गत प्रकाशित ग्रामोपयोगी पुस्तकें

पुस्तक	मूल्य रु.
आधुनिक मधुमक्खी पालन एवं प्रबन्ध	20.00
जिमीकन्द की खेती	15.00
मशरूम उत्पादन एवं उपयोगिता	12.00
किसानोपयोगी फसल सुरक्षा तकनीक	50.00
फसल उत्पादन तकनीक	35.00
जीरो टिल सीड कम फर्टी ड्रिल	10.00
फल–सब्जी परीरक्षण एवं मानव आहार	50.00
गन्ने की आधुनिक खेती	15.00
जीरो टिलेज गेहूँ बुवाई की एक विश्वसनीय तकनीक	20.00
केचुआ पालन (वर्मीकल्चर) एवं वर्मी कम्पोस्ट उत्पादन	10.00
व्यावसायिक कुक्कुट (ब्रायलर) उत्पादन	20.00
फसलों के सूत्रकृमि रोग एवं उनका वैज्ञानिक प्रबन्धन	25.00
आय संवर्धन हेतु प्रमुख सब्ज़ियों की उत्पादन तकनीक	25.00
गृहणियों के लिए बेकिंग कला	25.00
स्वच्छ दूध उत्पादन तकनीक एवं उसका महत्व	20.00
गायों एवं भैसों के मुख्य रोग, टीकाकरण एवं संतुलित पशु आहार	20.00
मछली पालन	40.00
फसल अवशेष प्रबंधन	30.00

प्रति रूपये 25/–मात्र

मुद्रित

सेवा में,
श्री/श्रीमती

प्रेषक:
प्रसार निदेशालय
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या की ओर से डॉ. आर.आर. सिंह अपर निदेशक प्रसार द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित